इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BPAC - 109

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन

BPAC-109

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो सी.वी. राघावुलु
नागार्जुन विश्वविद्यालय
के भूतपूर्व कुलपति,
गुटूंर (अ.प्र.)

प्रो. रमेश के. अरोड़ा
लोक प्रशासन के भूतपूर्व प्रोफेसर
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर

प्रो.ओ.पी.मिनोचा
लोक प्रशासन के भूतपूर्व प्रोफेसर
भारतीय लोक प्रशासन संस्थान
नई दिल्ली

प्रो.अरविन्द कूमार शर्मा
लोक प्रशासन के भूतपूर्व प्रोफेसर
भारतीय लोक प्रशासन संस्थान नई दिल्ली

प्रो.आर. के. सप्रू
लोक प्रशासन के भूतपूर्व प्रोफेसर
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़

प्रो.साहिब सिंह भयाना
लोक प्रशासन के भूतपूर्व प्रोफेसर
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ

प्रो. बी.बी. गोयल
लोक प्रशासन के भूतपूर्व प्रोफेसर
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ

प्रो.रवीन्द्र कौर
लोक प्रशासन विभाग
उसमानिया विश्वविद्यालय
हैदराबाद

प्रो.जी. पलनिांथुराई
राजनीति विज्ञान और विकास प्रशासन विभाग, गांधीग्राम
ग्रामीण विश्वविद्यालय, गांधीग्राम

प्रो. रमनजीत कौर जोहल
यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ ओपन लर्निगं, पजांब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़

प्रो.राजबंस सिंह गिल
लोक प्रशासन विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

प्रो.मंजूशा शर्मा
लोक प्रशासन विभाग
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र

प्रो.लालनिहजोवी
लोक प्रशासन विभाग
मिजोरम केद्रींय विश्वविद्यालय
आइजोल

प्रो.निलिमा देशमुख
लोक प्रशासन की भूतपूर्व प्रोफेसर राष्ट्रपति तुकडोजी महाराज नागपुर विश्वविद्यालय
नागपुर

प्रो. राजवीर शर्मा
भूतपूर्व वरिष्ठ सलाहकार,
लोक प्रशासन सकांय,
एस.ओ.एस.एस. इग्नू,
नई दिल्ली

प्रो.संजीव कुमार महाजन
लोक प्रशासन विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
शिमला

प्रो. मनोज दीक्षित
लोक प्रशासन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

प्रो. सुधा मोहन
नागरिक और राजनीति विभाग,
मुबंई विश्वविदयालय, मुबंइ

इग्नू संकाय
प्रो.प्रदीप साहनी
प्रो. ई. वायुनंदन
प्रो.उमा मेडूरी
प्रो.अलका धमेजा
प्रो. डोली मैथ्यू
प्रो. दुर्गेश नंदिनी

सलाहकार
डॉ. संध्या चोपड़ा
डॉ. ए.सेंथमिल कनल

सी.बी.सी.एस. कार्यक्रम संयोजक
प्रो. डोली मैथ्यू
प्रो. दुर्गेश नंदिनी

पाठ्यक्रम संयोजक
प्रो.उमा मेडूरी
समाजिक विज्ञान विद्यापीठ,
इग्नू

पाठ्यक्रम, भाषा स्वरूपण और संयोजक   अनुवाद पुनरीक्षक

प्रो.उमा मेडूरी,
समाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू

डा. संध्या चोपड़ा
डा. चित्रलेखा अंशु पोस्ट डॉक्टोरल फ़ेलो इग्नू (इकाईयां 1 और 2)

सचिविय सहायक
कांता रावत

पाठ्यक्रम तैयारी दल

	खंड	इकाई लेखक	हिन्दी अनुवाद
खंड 1	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः वैचारिक रूपरेखा और प्रासंगिक संदर्भ**		
इकाई 1	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः अवधारणा, स्वरुप, कार्यक्षेत्र और विशेषताएं**	डॉ. सी. एच. सी. प्रसाद, सहायक निर्देशक, बी. आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद।	डा. दिव्या सेठी
इकाई 2	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः संवैधानिक संदर्भ**		डा. दिव्या सेठी
इकाई 3	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः राजनीतिक और सामाजिक–आर्थिक संदर्भ**		ज्योति मलिक
खंड 2	**शासन**		
इकाई 4	**शासनः एक अवधारणा**	डा. श्वेता मिश्रा वरिष्ठ सहायक प्रोफेसर, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय	ज्योति मलिक
इकाई 5	**नौकरशाही और राजनीतिक कार्यपालिका की भूमिका**	डॉ. अनुपमा महाजन, पूर्व पोस्ट डॉक्टोरल शोधकर्ता, (लोक प्रशासन) हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला	प्रतिभा रानी
इकाई 6	**विधायिका और न्यायपालिका की भूमिका**		प्रतिभा रानी
इकाई 7	**शासन में नेटवर्किंग और अंतर–संस्थागत समन्वय**		प्रतिभा रानी
खंड 3	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन तकनीक**		
इकाई 8	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन और नई प्रौद्योगिकियों**	डॉ. सी. एच. सी. प्रसाद, सहायक निर्दशक, बी. आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद।	प्रतिभा रानी
इकाई 9	**प्रमुख प्रबंधन साधन (सामरिक प्रबंधन, कार्य मापन, निर्णय–निर्माण की तकनीकें)**	डॉ. अनुपमा महाजन, पूर्व पोस्ट डॉक्टोरल शोधकर्ता, (लोक प्रशासन) हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला	प्रतिभा रानी
इकाई 10	**प्रबंधन सूचना प्रणाली**	डा. सचिन चौधरी, एसोसिएट प्रोफेसर, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान दिल्ली	ज्योति मलिक
इकाई 11	**संपूर्ण गुणवत्ता प्रबंधन**	डा. वन्दना डाबला, प्रोजेक्ट अधिकारी, सोसाइटी फॉर हैल्थ एलिड रिसर्च एंड एडुकेशन इंडिया, नई दिल्ली	ज्योति मलिक
खंड 4	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः उभरते परिप्रेक्ष्य**		
इकाई 12	**उत्तरदायित्व**	स्वं. प्रो. मोहित भट्टाचार्या (यह इकाई एम. पी. ए–013–सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की इकाई–19 (उत्तादायित्व) का अनुकूलित रूप है।)	प्रतिभा रानी
इकाई 13	**जवाबदेही**	डॉ. अनुपमा महाजन, पूर्व पोस्ट डॉक्टोरल शोधकर्ता, (लोक प्रशासन) हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला	प्रतिभा रानी
इकाई 14	**पारदर्शिता और सूचना का अधिकार**	डा. जयतिलक गुहा राय, लोक प्रशासन के प्रोफेसर (सेवानिवृत) भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली।	प्रतिभा रानी
इकाई 15	**सुधार और परिवर्तन प्रबंधन**	डॉ. अनुपमा महाजन, पूर्व पोस्ट डॉक्टोरल शोधकर्ता, (लोक प्रशासन) हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला	प्रतिभा रानी

सामग्री निर्माण

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
एम.पी.डी.डी. इग्नू, नई दिल्ली

जलाई, 2021

© इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2020

ISBN:

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110 068 से प्राप्त की जा सकती है।
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, सां. नि. एवं वि. प्रभाग द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।
लेजर टाइप सेटिंग : आकाशदीप प्रिंटर्स, 20–अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002
मुद्रक :

विषय सूची

		पृष्ठ
पाठ्यक्रम परिचय		**5**
खंड 1	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः वैचारिक रूपरेखा और प्रासंगिक संदर्भ**	**11**
इकाई 1	सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः अवधारणा, स्वरुप, कार्यक्षेत्र और विशेषताएं	13
इकाई 2	सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः संवैधानिक संदर्भ	28
इकाई 3	सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः राजनीतिक और सामाजिक–आर्थिक संदर्भ	47
खंड 2	**शासन**	**65**
इकाई 4	शासनः एक अवधारणा	67
इकाई 5	नौकरशाही और राजनीतिक कार्यपालिका की भूमिका	83
इकाई 6	विधायिका और न्यायपालिका की भूमिका	95
इकाई 7	शासन में नेटवर्किंग और अंतर–संस्थागत समन्वय	112
खंड 3	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन तकनीक**	**127**
इकाई 8	सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन और नई प्रौद्योगिकियाँ	129
इकाई 9	प्रमुख प्रबंधन साधन (सामरिक प्रबंधन, कार्य मापन, निर्णय–निर्माण की तकनीकें)	147
इकाई 10	प्रबंधन सूचना प्रणाली	162
इकाई 11	संपूर्ण गुणवत्ता प्रबंधन	181
खंड 4	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः उभरते परिप्रेक्ष्य**	**197**
इकाई 12	उत्तरदायित्व	199
इकाई 13	जवाबदेही	216
इकाई 14	पारदर्शिता और सूचना का अधिकार	231
इकाई 15	सुधार और परिवर्तन प्रबंधन	244
Suggested Readings		**259**

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पाठ्यक्रम परिचय

सार्वजनिक प्रबंधन प्रणालियों पर ध्यान केंद्रित करता है, आउटपुट (उत्पादन) गुणवत्ता प्रबंधन, रणनीतिक योजना, प्रदर्शन माप आदी पर जोर देता है। यह सार्वजनिक संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक व्यवहारिक दृष्टिकोण प्रदान करने के लिए कहता है। इस पाठ्यक्रम में 15 इकाइयाँ हैं जो सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन से संबंधित विभिन्न पहलुओं का निरीक्षण करती है।

खंड–1 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः वैचारिक रूपरेखा और प्रासंगिक संदर्भ

इस ब्लॉक में तीन इकाइयाँ हैं। सार्वजनिक प्रणालियाँ सार्वजनिक क्षेत्र में संचालित कई उप–प्रणालियों की सामूहिकता को संदर्भित करती हैं। ये एक प्रसंगिक व्यवस्था में कार्य करते हैं। यह शिक्षार्थियों को सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के क्षेत्र में अवधारणाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

इकाई 1 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः अवधारणा, स्वरुप, कार्यक्षेत्र और विषेषताएं

यह इकाई सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन (Public Systems Management-PSM) की अवधारणा और प्रकृति का परिचय देती है। पीएसएम नए राज्य संस्थानों, प्रशासनिक संस्कृति और प्रबंधन रणनीतियों का वर्णन करती है जिनका विश्लेषण इकाई के विस्तार से किया गया है।

इकाई 2 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः संवैधानिक संदर्भ

सार्वजनिक प्रणालियाँ एक विशेष प्रसंगिक व्यवस्था के भीतर कार्य करती है, जो सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और तकनीकी कारकों से प्रभावित होती है। इस इकाई में चर्चा का केंद्र सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का संवैधानिक परिवेश है। भारतीय संविधान और अन्य महत्वपूर्ण आयोगों के तहत बनाए गए विभिन्न प्राधिकरणों और आयोगों को इकाई में वर्णित किया गया है।

इकाई 3 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः राजनीतिक और सामाजिक–आर्थिक संदर्भ

सार्वजनिक प्रणाली एक राजनीतिक प्रणाली के व्यापक ढांचे के भीतर अंतः स्थापित है। इसके अतिरिक्त पीएसएम की व्यापक समझ के लिए देश के सामाजिक–आर्थिक कारकों के विश्लेषण की भी आवश्यकता होती है जो पृष्ठभूमि को निर्धारित करते हैं और इसके कामकाज को प्रभावित करते हैं। यह इकाई राज्य, नियामक राज्य और नागरिकों के अधिकारों को वापस लेने की अवधारणा पर चर्चा करती है साथ ही, सार्वजनिक प्रणालियों के कामकाज को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक कारकों का विश्लेषण करती है।

खंड–2 शासन

शासन पर विचार विमर्श को विभिन्न आयामों और रूपों के रूप में माना जा रहा है। कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका की भूमिका परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। शासन प्रक्रिया में कई हितधारकों की भागीदारी नीति निर्माण में सहयोग के परिणामस्वरूप होती है। जिससे नेटवर्किंग और अंतर–संस्थागत समन्वय के मुद्दों को संबोधित करने के लिए कार्यान्वयन के द्वारा उनका समाधान करने की आवश्यकता होती है। सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति के संदर्भ में इसका अधिक महत्व है। यह ब्लॉक इन पहलुओं की विस्तार से जांच करता है।

इकाई 4 शासनः एक अवधारणा

20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से शासन की अवधारणा सार्वजनिक प्रबंध में प्रमुख हो गई। इसके लिए योगदान कारक भूमंडलीकरण, बाजार की शक्तियों का उदय, नागरिक समाज, नागरिकों की अपेक्षाओं में वृद्धि आदि है। यह इकाई शासन की अवधारणा का परिचय देती है और सरकार और शासन के बीच जो अंतर है उसके प्रमुख कारणों को उजागर करती है। विश्व बैंक, ओ ई सी डी (OECD), यू एन डी पी (UNDP) और यूनेस्को द्वारा निर्धारित शासन की विभिन्न वैचारिक व्याख्याओं पर चर्चा की जाती है। शासन की अवधारणा का उपयोग कई संदर्भों में किया जाता है जैसे कि न्यूनतम राज्य, नव लोक प्रबंधन, सुशासन, सामाजिक– साइबरनेटिक प्रणाली, स्व–व्यवस्थित नेटवर्क जो विश्लेषण करती है। यह इकाई शासन के विभिन्न रूपों का वर्णन करती है जो राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक है। यह इकाई शासन का मूल्यांकन प्रदान करती है।

इकाई 5 नौकरशाही और राजनीतिक कार्यपालिका की भूमिका

नौकरशाही और राजनीतिक कार्यपालिका शासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राजनीतिक कार्यपालिका लोगों का प्रतिनिधित्व करती है और इसकी नागरिकों की जरूरतों को सार्वजनिक नीतियों में परिवर्तित करने की जिम्मेदारी होती है। नौकरशाही पर सार्वजनिक नीति और कानून निर्माण और कार्य नियंत्रण करने में राजनीतिक कार्यकारी की महत्वपूण भूमिका है। नौकरशाही नीतियों को लागू करने के लिए सरकार द्वारा भर्ती किए गए लोगों को संदर्भित करती है। इकाई नौकरशाही के सामान्य रूप से स्वीकार किए गए तीन अर्थो की व्याख्या करती है–वेबेरियन, संरचनात्मक–कार्यात्मक और गतिशील नौकरशाही के बहुआयामी कार्यों पर चर्चा की जाती है। नौकरशाही और राजनीतिक कार्यकारी के बीच संबंध परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। पूर्व की अलग–अलग भूमिकाएं, एक–दूसरे पर निर्भर और स्वरूप में पूरक बनने का मार्गदर्शन प्रदान कर रही हैं। यह इकाई नौकरशाही और राजनीतिक कार्यकारी के बीच संबंधों के बदलते रंग का विश्लेषण करती है।

इकाई 6 विधायिका और न्यायपालिका की भूमिका

शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत भारतीय राजनीतिक प्रणाली में लोकतंत्र के तीन स्तंभों–कार्यकारी, विधायिका और न्यायपालिका के साथ लागू होता है जो अलग–अलग संस्थाओं के रूप में अलग–अलग कार्य करते हैं। विधायिका राज्य व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है। कार्यपालिका और न्यायपालिका विधायिका पर निर्भर है, क्योंकि इसे कानून निर्माण और राजनीतिक कार्यकारी द्वारा निर्धारित नीतियों को वैध बनाने का कार्य सौंपा गया है। यह इकाई विधायिका के कार्यों को व्यापक रूप से कानून बनाने, जनता की राय, वित्तीय, चुनावी जिम्मेदारियों और इसी तरह के चिंतन से संबंधित है। न्यायपालिका की कानून के नियम के सिद्धांतों को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका है। यह इकाई भारतीय न्यायपालिका की संरचना से संबंधित है। यह कानून बनाने, इसकी व्याख्या, न्यायिक समीक्षा, संघ राज्य संघर्ष समाधान आदि जैसे महत्वपूर्ण कार्यो के साथ निहित है, जिनकी इकाई में चर्चा की जाती है। इकाई न्यायिक सक्रियता, जनहित याचिका और रिट याचिकाओं के प्रकारों के प्रमुख पहलुओं के साथ शिक्षार्थियों को प्रस्तुत है। यह इकाई न्यायपालिका के कामकाज में जो समस्याएं आती है उनकी खोज करती है।

इकाई 7 शासन में नेटवर्किंग और अंतर–संस्थागत समन्वय

शासन की प्रक्रिया में विभिन्न हितधारकों जैसे कि निजी क्षेत्र, गैर–लाभकारी क्षेत्र, समुदाय, अन्य राज्यों और देशों की भागीदारी से शासन की जटिलता परिवर्तित हो रही है। यह

व्यापक रूप से नेटवर्क शासन प्रमुखता प्राप्त कर रहा है जिसका उद्देश्य सहयोगी और समावेशी नीति बनाना है। यह संगठनात्मक संधि का एक रूप है जिसमें संबंधित नीति अभिनेताओं को सह–निर्माता के रूप में एक साथ जोड़ती है, जहां वे अपने सामान्य हितो की पहचान और उन्हें सांझा करते हैं। यह इकाई शिक्षार्थियों को नेटवर्क शासन, उसके तत्वों और कार्यनीतियों की अवधारणा के साथ प्रस्तुत करती है। इसमें नेटवर्क शासन के प्रकारों पर चर्चा होती है। इससे विशेषज्ञताओ के समूह, हितधारक की वचनबद्धता, आसानी से परिचालन आदि जैसे लाभ प्राप्त होते हैं। नेटवर्क शासन की सीमाएं और चुनौतियां हैं जिनमें समन्वय, संचार और लक्ष्य अनुकूलता इत्यादि शामिल है। यह इकाई इनकी विस्तार से जाँच करती है।

खंड–3 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन तकनीक

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन प्रभावशीलता और दक्षता प्राप्त करने पर ध्यान केंद्रित करता है जो महत्वपूर्ण प्रबंधन उपकरणों के आवेदन की आवश्यकता को समझाता है। सूचना एक महत्वपूर्ण संसाधन है। इसे सार्वजनिक प्रणाली और सार्वजनिक सेवा वितरण के प्रबंधन, निर्णय लेने में सहायता के रूप में उपयोग करने की आवश्यकता है। गुणवत्ता प्रबंधन एक और महत्वपूर्ण चिंता का विषय है। यह ब्लॉक प्रमुख प्रबंधन तकनीकों और सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग पर केंद्रित है।

इकाई 8 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन और नई प्रौद्योगिकियाँ

21वीं सदी को सूचना का युग माना जाता है। यह प्रमुख संसाधन है जो बेहतर सार्वजनिक प्रशासन सुनिश्चित करता है। आज के ज्ञान समाज में, आई सी टी (ICT) में अभूतपूर्व विकास, सतत विकास में योगदान देता है। यह इकाई सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन में नई प्रौद्योगिकियों की भूमिका के बारे में शिक्षार्थियों को सक्षम करने का प्रयास करती है। यह इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल शासन के रूप में शासन में आई सी टी के आवेदन के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करता है। इकाई सार्वजनिक सेवा वितरण के क्षेत्र में शासन में आईसीटी का उपयोग करने के महत्वपूर्ण आयामों को सामने लाती है। राष्ट्रीय, राज्यों और अंतराष्ट्रीय स्तर पर ई–गवर्नेस पहलों पर विस्तार से वर्णन किया गया है। सार्वजनिक प्रणालियों के प्रबंधन में आई सी टी के आवेदन के कई लाभो के बावजूद, कुछ निश्चित बाधाएं भी है जिनकी इकाई में विस्तृत रुप से चर्चा की गई है।

इकाई 9 प्रमुख प्रबंधन साधन (सामरिक प्रबंधन, कार्य मापन, निर्णय–निर्माण की तकनीकें)

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन गुणवत्ता, ग्राहक अभिविन्यास, प्रभावशीलता और दक्षता पर जोर देता है। सार्वजनिक सेवा वितरण में इन्हें शामिल करने के लिए कुछ मात्रात्मक और प्रबंधन तकनीकों के आवेदन की आवश्यकता होती है। यह इकाई शिक्षार्थियों को महत्वपूर्ण तकनीकों–कार्यनीतिक प्रबंधन, कार्य माप और निर्णय–निर्माण से परिचित कराती है। कार्यनीतिक प्रबंधन एक संगठन के उद्देश्यों को निर्दिष्ट करने, नीतियों को विकसित करने और उद्देश्यों को प्राप्त करने की योजना और योजनाओं को लागू करने के लिए संसाधनों को आवंटित करने की प्रक्रिया है। कार्य माप, निर्धारित कार्यों को पूरा करने के लिए, मानसिक और शारीरिक, दोनों के समय को मापने की तकनीक है। कार्य मापन के तरीकों पर विस्तृत चर्चा की गई है। इकाई महत्वपूर्ण निर्णय–निर्माण की तकनीकों का वर्णन करती है। जिसमें शास्त्रीय विद्यालय, वृद्धिशील राजनीतिक आदर्श, मिश्रित अवलोकन और अपशिष्ट आदेश शामिल हो सकते हैं। शिक्षार्थियों को इन साधन की प्रक्रियाओं और उपयोगिता की समझ विकसित करने में सक्षम बनाने का प्रयास किया जाता है।

इकाई 10 प्रबंधन सूचना प्रणाली

सेवा वितरण में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन प्रभावशीलता और दक्षता से संबंधित प्रसंग है और यह सार्वजनिक मांगों को पूरा करने में प्रमुखता प्राप्त कर रहा है। सूचना एक प्रमुख संसाधन है और सही प्रबंधकीय निर्णय लेने और सेवा वितरण के लिए इसका उपयोग करने दिए जा रहे महत्व में वृद्धि हो रही है। प्रबंधन सूचना प्रणाली (Management Information System-MIS) डेटा बेस के रूप में सूचना की उपलब्धता को आसान बनाता है। यह इकाई शिक्षार्थियों को एम आई एस (MIS) के वैचारिक ढांचे से परिचित कराती है और इसका विकास और क्रमागत उन्नति का प्रक्षेप पथ प्रदान करती है। MIS में कुछ विशिष्ट विशेषताएं हैं जैसे कि प्रबंधन अभिविन्यास, लचीलापन, एकीकृत प्रकृति आदि, जिनकी चर्चा की गई है। एम आई एस ढांचे के महत्वपूर्ण घटकों को समझाया गया है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण विकास गारंटी अधिनियम से संबंधित मामले के अध्ययन की सहायता से MIS की अवधारणा और आवेदन को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है। यह इकाई सार्वजनिक सेवाओं में एम आई एस का मूल्यांकन देने का प्रयास करती है।

इकाई 11 संपूर्ण गुणवत्ता प्रबंधन

समकालीन समय सार्वजनिक प्रणालियों में संपूर्ण गुणवत्ता प्रबंधन (Total Quality Management TQM) पर बढ़ती निर्भरता देख रहा है। TQM एक प्रबंधक योजना और प्रक्रिया है जो ग्राहकों की अपेक्षाओं को पूरा करने, संगठन में समस्याओं की पहचान करने, प्रतिबद्धता बनाने और संगठन में प्रभावी निर्णय लेने को बढ़ावा देने पर केंद्रित है। इकाई TQM की अवधारणा और लोक प्रशासन के लिए इसके अनुप्रयोग की व्याख्या करती है। यह भारत में TQM के विकास का पता लगाती है। टी क्यू एम के प्रमुख सिद्धांत विस्तृत हैं। TQM के कुछ उपकरण है जैसे कि Plan-Do-Check-Act, SWOT विश्लेषण, बेंचमार्किंग जो इकाई में वर्णित है। यह इकाई TQM की शक्तियों और चुनौतियों का मूल्यांकन प्रदान करती है।

खंड–4 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः उभरते परिप्रेक्ष्य

इस ब्लॉक में चार इकाइयाँ हैं जो जिम्मेदारी, जवाबदेही, पारदर्शिता सुधार और परिवर्तन से प्रबंधन से संबंधित महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करती हैं। ये क्षेत्र लोक प्रशासन के क्षेत्र में उभरते हुए दृष्टिकोण/परिप्रेक्ष्य हैं।

इकाई 12 उत्तरदायित्व

उत्तरदायित्व शासन की प्रमुख विशेषता है। सार्वजनिक सेवा जिम्मेदारी में वे विधियाँ शामिल है जिनके माध्यम से एक सार्वजनिक एजेंसी या एक सार्वजनिक अधिकारी निर्धारित कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को पूरा करता है। इकाई उत्तरदायित्व की अवधारणा, प्रकृति और महत्व की जांच करती है। उत्तरदायित्व के उद्देश्यों और प्रमुख पहलुओं को समझाया गया है। उत्तरदायित्व के विभिन्न उपकरणों का विश्लेषण किया गया है। दक्षता, परिणाम, प्रतियोगिता और ग्राहक अभिविन्यास के लिए शासन में समकालीन परिवर्तन आदि उत्तरदायित्व के लिए विकट चुनौतियाँ हैं जिनकी इकाई में जांच की गई है। इकाई उत्तरदायित्व के बदलते दृष्टिकोण से संबंधित है। यह इकाई वैश्विक शासन में समकालीन चिंता–उत्तरदायित्व से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को उजागर करती है।

इकाई 13 जवाबदेही

जवाबदेही लोक प्रशासन के अनुशासन और व्यवहार में नए आयाम मान रही है। यह वह तरीका है जिसमें सार्वजनिक प्रणाली लोगों की जरूरतों के लिए कुशलतापूर्वक और प्रभावी

ढंग से प्रतिक्रिया देती है। यह इकाई जवाबदेही की अवधारणा को समझाती है और उन तंत्रों पर विचार–विमर्श करती है, जिनके माध्यम से प्रशासन प्रौद्योगिकी, सार्वजनिक सहभागिता, नागरिकों के चार्टर इत्यादि उत्तरदायी हो सकते हैं। यह पारंपरिक वेबेरियन लोक प्रशासन प्रारूप से नव लोक प्रबंधन तक सार्वजनिक प्रणालियों में जवाबदेही के बदलते दृष्टिकोण का विश्लेषण करती है। इकाई नव लोक सेवा और नव लोक शासन के सिद्धांतों की जांच करती है जो जवाबदेही के नए आयामों पर केंद्रित है। बेहतर जवाबदेही सुनिश्चित करने में समयद्धता के महत्व पर चर्चा की गई है।

इकाई 14 पारदर्शिता और सूचना का अधिकार

पारदर्शिता सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का महत्वपूर्ण पहलू है। शासन में खुलेपन, पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देने के लिए नागरिक के सूचना के अधिकार को महत्वपूर्ण साधन के रूप में मान्यता दी जा रही है। इकाई पारदर्शिता की अवधारणा को समझाती है। यह सूचना के अधिकार पर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण प्रदान करती है। सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 व्यापक है जिसमें स्वतंत्र अपील, गैर–अनुपालन के लिए दंड, सक्रिय प्रकटीकरण आदि के प्रावधान शामिल है। इकाई अधिनियम की मुख्य विशेषताओं पर विस्तार से बताती है। यह सूचना के अधिकार को लागू करने में चुनौतियों का विश्लेषण भी करता है।

इकाई 15 सुधार और परिवर्तन प्रबंधन

सुधार और परिवर्तन प्रबंधन सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का महत्वपूर्ण घटक है। वैश्वीकरण और सामाजिक, संस्थागत, आर्थिक, राजनीतिक, संस्कृतिक और तकनीकी वातावरण में परिवर्तन सुधारो और परिवर्तन के लिए जिम्मेदार है नव लोक प्रबंधन और उत्तर नवलोक प्रबंधन (Post-NPM) सुधारो ने सार्वजनिक प्रणालियों और शासन में विश्व स्तर पर और भारत में भी परिवर्तन लाए हैं। यह इकाई शिक्षार्थियों को सुधार और परिवर्तन प्रबंधन और उनकी आवश्यकताओं के अर्थ के साथ प्रस्तुत करती है। भारत में प्रशासनिक सुधारों का इतिहास है और यह इकाई इनका संक्षिप्त विवरण प्रदान करती है। 2005 में गठित दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग ने कई क्षेत्रों पर व्यापक सिफारिशें दी जिसकी इकाई में चर्चा की गई है। सार्वजनिक प्रणाली सुधारों में शामिल समावेश और शासन, बुनियादी ढांचे को नीति आयोग द्वारा आगे रखा गया है जो इकाई में उल्लिखित है। वित्तीय क्षेत्र के सुधारों पर इकाई में चर्चा है जिसमें परिणाम आधारित बजट, राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन (एफ आर बी एम) (FRBM), माल और सेवा कर अधिनियम, 2016, (Goods and Services Tax 2017) डिजिटलीकरण आदि शामिल है। परिवर्तन प्रबंधन एक सतत प्रक्रिया है जो एक सार्वजनिक संगठन के सभी स्तरों पर व्याप्त है और इकाई परिवर्तन प्रबंधन प्रक्रिया के प्रमुख पहलुओं की जांच करती है। सुधारों के कार्यान्वयन में कुछ चुनौतियां और समस्याएं हैं जैसे परिवर्तन का प्रतिरोध, राजनीतिक इच्छाशक्ति, सुधारों की व्यवहार्यता आदि जिसका इकाई में विस्तार से वर्णन किया गया है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 1 – सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन: वैचारिक रूपरेखा और प्रासंगिक संदर्भ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 1 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः अवधारणा, स्वरूप, कार्यक्षेत्र और विशेषताएं*

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः अवधारणात्मक ढांचा

1.3 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का उद्‌भवः सैद्धांतिक आधार

1.4 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः स्वरूप

1.5 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः कार्यक्षेत्र

1.6 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः विशेषताएं

1.7 निष्कर्ष

1.8 शब्दावली

1.9 संदर्भ लेख

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्न को समझ सकेंगेः

- सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का अवधारणात्मक ढांचा;
- सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का सैद्धांतिक आधार;
- सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के स्वरूप;
- सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का कार्यक्षेत्र; और
- उसकी विशेषताओं का विश्लेषण।

1.1 प्रस्तावना

वास्तव में लोक प्रशासन एक विशेष शैक्षणिक क्षेत्र के रूप में सरकार की प्रक्रियाओं और साधनों के साथ संबंधित है। यह सिद्धांत और व्यवहार का एक संयोजन है। सरल शब्दों में, यह राजनीतिक व्यवस्था के उद्देश्यों की पूर्ति से संबंधित कार्यवाही का हिस्सा है। समकालीन वैश्विक विकास के दृष्टिकोण से, लोक प्रशासन एक अभ्यास और एक शिक्षण के रूप में, परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। वर्तमान वैश्वीकरण रुझानों ने राज्य और सरकार की भूमिका पर पुनर्विचार को अग्रेसित किया है।

*योगदानः डॉ. सी. एच. सी. प्रसाद. सहायक निदेशक, डॉ. बी. आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

पारंपरिक लोक प्रशासन से संबंधित मान्यताएं लगातार समसामयिक घटनाओं द्वारा ध्वस्त हो रही हैं। लोक प्रशासन की विषय-वस्तु बड़े पैमाने पर परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं। लोक सेवा प्रदान में सुधार के लिए नए प्रकार के सार्वजनिक संगठनों, अवधारणाओं, तकनीकों, और प्रक्रियाओं का अन्वेशण किया जा रहा है। इसका परिणाम यह है कि लोक प्रशासन में विभिन्न नए प्रतिमानों का विकास हो रहा है। 1980 के दशक में लोक प्रशासन के विद्वानों ने सरकारी व्यवस्था में, एक प्रभावी तरीके से, सार्थक प्रबंधन प्रथाओं को अपनाने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला था। लोक प्रशासन में नव लोक प्रबंधन (New Public Management; NPM) एक ऐसी ही अभिव्यक्ति है। नव लोक प्रबंधन प्रतिमान लोक प्रशासन के क्षेत्र में सुधारों की श्रृंखला के रूप में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन (Public Systems Management; PSM) में एक नया आयाम लाता है। इस इकाई में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की उत्पत्ति, स्वरूप, कार्यक्षेत्र और विशेषताओं के विश्लेषण का प्रयास किया गया है।

1.2 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः अवधारणात्मक ढांचा

गोर और स्टब (1994) के अनुसार, कोई भी व्यवस्था (System) ''निवेश को उत्पाद में परिवर्तित करने के लिए एक साथ काम करने वाले संसाधनों का एक संयोजन'' है। हर एक संस्थान का अपना लक्ष्य होता है जिसके लिए वह एक व्यवस्था बनाता है, वस्तु या सेवा के रूप में उनके पास जो आगम (निवेश) होते है, अपने लक्ष्य के अनुसार वह उसे भी उत्पाद में परिवर्तित करत देते है। उदाहरण के लिए, यह कर्मचारी, वित्त, प्रचालन तंत्र, विपणन प्रणाली, इत्यादि हो सकते हैं। मोटे तौर पर, सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन में सार्वजनिक क्षेत्र में परिचालित छोटी-छोटी व्यवस्थाएँ शामिल होती हैं। उनमें से हर एक छोटी इकाई के अपने लक्ष्य होते हैं जिसे वे मानव संसाधन, वित्तीय संसाधन और वस्तुओं की सहायता से प्राप्त करते हैं। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन नियम, कानून, लोगों की ज़रूरत और सार्वजनिक उपक्रमों के आधार पर काम करता है।

सार्वजनिक क्षेत्र या व्यवस्था को एक निर्धारित ढांचे के भीतर, निर्वहन और संचालित करने के लिए, कुछ विशिष्ट विशेषताएं और कार्य होते हैं। इसलिए यह निजी क्षेत्र के सिद्धांतों और संचालन की शैलियों को पूरी तरह से स्वीकार नहीं कर सकता।जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि, पिछले 20 वर्षों में वैश्वीकरण ने सार्वजनिक प्रणाली पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। नव उदारवादी विचार और लोक चयन दृष्टिकोण के प्रभाव से राज्य की भूमिका कई क्षेत्रों में कम हुई है, नीति और कार्यान्वयन के बीच में विभाजन, और व्यवसाय प्रशासन (Professional Administration) का महत्व बढ़ा है। परन्तु सार्वजनिक प्रणाली अब भी राज्य, कानून, राजनीति, तथा लोगों के हित के अनुसार काम करता है।

सार्वजनिक प्रबंधन सुधार व्यवसाय प्रबंधन से प्रभावित है, जहां कंपनियों के प्रबंधकों को निर्णय लेने की स्वायत्तता प्राप्त है। फिर भी, निजी और सार्वजनिक संगठनों की विभिन्न प्रकृति से व्युत्पन्न लोक प्रशासन और व्यापार प्रशासन के मध्य के अंतर को स्पष्ट करने की आवश्यकता है। दोनों ही क्षेत्रों में दो आधारभूत भिन्नताएं हैं। पहली, व्यापारिक संस्थाओं के मालिक होते हैं जो लाभ के लिए काम करते है 'जबकि सार्वजनिक संस्थाओं में सभी की हिस्सेदारी होती है और लोगों के हित की खातिर काम के लिए किया जाता हैं। दूसरा, निजी कंपनी बाज़ार द्वारा शासित या समन्वित होती है, जो आार्थिक सिद्धांत के दायरे में आती है, जबकि राज्य खासतौर पर लोकतांत्रिक राज्य, लोकतंत्र की राजनीति के आधार पर काम करते हैं जिसका राजनीति विज्ञान और सार्वजनिक कानून द्वारा विश्लेषण किया जाता है (पेरेइरा, 2004, महत्व जोड़े संकलित)।

ऐसा कहा जा सकता है कि, सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन लोकसेवा और कार्यकारी सरकार की व्यवस्था की रूपरेखा बनाने और इसकी कार्यप्रणाली से संबंधित है। यह राज्य के नौकरशाहों के सुधार का प्रयास है जो, प्रबंधकों के रूप में नौकरशाहों के लिए एक प्रमुख भूमिका प्रदान करके, सरकार को और अधिक 'व्यापार के समान'("Business-like") बनाना चाहता है।

कई विद्वानों द्वारा सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन को सार्वजनिक नीति निर्माण और सार्वजनिक सेवाओं के वितरण में संलग्न, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संस्थानों के प्रशासन और प्रबंधन के योग्य माना गया है। यह प्रबंधन की वह शैली है जो उत्पादन लक्ष्य, सीमित अवधि के अनुबंध, मौद्रिक प्रोत्साहन और प्रबंधन करने की स्वतंत्रता पर ज़ोर देती है। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का ध्यान परिणामों दक्षता और माप पर केंद्रित होता है। बाजार, प्रबंधन और मापन (Markets, Management and Measurement) इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं।

लोक प्रशासन को हमेशा से नागरिकों को न्याय सम्य (Equity), प्रतिनिधित्व और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए जनहित को बढ़ावा देने का प्रमुख दायित्व सौंपा गया है। किंतु, समय के साथ, नौकरशाही, पदानुक्रम, नियम और कानून पर अधिकतम निर्भरता ने इसकी प्रभावकारिता और प्रभावशीलता पर महत्वपूर्ण प्रश्न उठाए हैं। कई घटकों जैसे सोवियत संघ का पतन, सार्वजनिक व्यय और कराधान का बढ़ता स्तर, नौकरशाही की संरचना और कार्यप्रणाली से असंतोश, व वैश्वीकरण के प्रभाव ने सार्वजनिक प्रणालियों के संचालन में प्रबंधन अभिविन्यास (Managerial Orientation) को जन्म दिया है।

नव लोक प्रबंधन के तहत सुधार, निजीकरण और ठेकेदारी (बाहरी अनुबंध–Outsourcing), अविनियमन, गैर-नौकरशाही, सेवाओं का बाजारीकरण और मजबूत निष्पादन प्रबंधन को सम्मिलित करते हैं। इन सुधारों ने सार्वजनिक संगठनों को पुराने नियमबद्ध वेबरियन अभिरूप से विशाल सार्वजनिक क्षेत्र को कम करने और सार्वजनिक सेवा व्यवस्थाओं को अधिक ''व्यापार की तरह'' बनाने के लिए स्थानांतरित करने का प्रयास किया।

उपरोक्त सभी पद्धतियां सार्वजनिक प्रणाली को प्रतियोगात्मक बनाने का संकेत देती हैं जिसका आधार बेहतर प्रबंधन है। सरकारी व्यवस्था में अब विश्व स्तर पर एक नई किस्म की तकनीक और तरीका अपनाया जा रहा है। सार्वजनिक संस्थाएं अब निजी प्रबंधन के विभिन्न तरीकों द्वारा चलाई जा रही हैं। इतिहास बताता है कि विश्व भर में नौकरशाही ने कभी-कभार ही अपने देश के माहौल की चुनौतियों का प्रभावी तरीके से सामना किया है उनके कार्य समय के साथ पिछड़ गए थे। प्रबंधन के विद्वानों ने नौकरशाही के इस विकार के कई उपचार प्रस्तुत किए हैं। नव लोक प्रबंधन ऐसा ही प्रस्ताव है। पारम्परिक लोक प्रशासन टेलर के वैज्ञानिक प्रबंधन और वेबेरियन आदर्श पर आधारित था, जो कार्य के विभाजन, विशेषज्ञता, वैयक्तिकता, तार्किकता, निष्पक्षता और लोक सेवा में गुमनामी पर ज़ोर डालता है। ये आदर्श प्रशासनिक व्यवस्था की आंतरिकता पर ज़ोर डालते हैं और उसके बाह्यीकरण की उपेक्षा करते हैं। बिना लचीलेपन वाले यह आदर्श उल्लेखनीय सामाजिक परिवर्तन में बाधा डालते हैं। जबकि लोक प्रशासन का अधिक बेहतर विकल्प विलसोनियन के राजनीति और प्रशासन के द्विभाजन के सिद्धांत पर आधारित आदर्श है। इस द्विभाजन के परिणामों में अक्षम नौकरशाही; राजनेताओं, नौकरशाहों और दबाव समूहों या प्रतिष्ठित हितों के बीच सांठ–गांठ; प्रशासन से नागरिकता का अलगाव; और सरकारी खजाने पर बढ़ते वित्तीय बोझ का भार शामिल हैं। इस विषय पर बहुत से अध्ययनों ने यह सवाल उठाया है कि, आज के परिपेक्ष्य में, सार्वजनिक प्रणाली का यह मॉडल कितना उपयुक्त और प्रभावकारी है और यहीं से लोक प्रशासन के दूसरे बेहतर मॉडल की तलाश शुरू हुई। परिणाम यह हुआ कि सार्वजनिक प्रणाली के प्रबंधन में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। इन परिवर्तनों का उद्देश्य है सार्वजनिक व्यवस्थाओं के क्रियाकलापों

में प्रभावशीलता और अर्थव्यवस्था के लिए बाजार उन्मुखीकरण के साथ सार्वजनिक संस्थानों की भूमिका को उद्यमी बनाना। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की उत्पत्ति के लिए प्रमुख कारक के तौर पर की नव लोक प्रबंधन का प्रभाव रहा है।

आइए अब हम नव लोक प्रबंधन के सैद्धांतिक आधार की चर्चा करते हैं, जिसने सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के बढ़ते महत्व के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

1.3 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का उद्‌भवः सैद्धांतिक आधार

वैश्वीकरण ने राष्ट्रों और उनकी सरकारों को वैश्विक सामूहिक शक्ति के पुनर्गठन और सार्वजनिक नीति विकल्पों में संरचनात्मक रूप से समायोजित करने के लिए प्रभावित किया है। शासन और विश्वव्यापी आत्मनिर्भरता के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ के साथ राज्य, सरकार और लोक प्रशासन की प्रकृति बदल गई हैं। राज्य का बदलता स्वरूप एक वैश्विक घटना है। अधिकांश देशों ने राज्य की भूमिका को सीमित करने के लिए अपनी सार्वजनिक प्रणालियों में संरचनात्मक समायोजन किया है जिसमें नौकरशाही की विस्तार निम्नीकरण (Downsizing), प्राधिकरण का विचलन, लागत में कमी, कुछ कार्यकारी कार्यों का अनुबंध करना, और सरकारी गतिविधियों का बाजार उन्मुखीकरण तथा व्यावसायीकरण के साथ-साथ परिणाम-उन्मुख मूल्यांकन प्रणाली का विकास और रूपरेखा बनाना शामिल है। तर्क यह है कि अधिक बाजार का अर्थ कम सरकारी उपस्थिति नहीं होता, किंतु पृथक सरकारी उपस्थिति होता है। प्रशासन स्पष्ट रूप से शासन से परिणाम उन्मुखीकरण, व्यवस्था से उद्यम, आज्ञाकारिता से इनाम, निष्क्रियता से कार्रवाई, केंद्रीयकरण से विकेंद्रीकरण, और प्रशासकों के कर्तव्यों से नागरिकों के अधिकारों की ओर बढ़ रहा है। समकालीन सुधार प्रशासन को प्रबंधन दर्शन की ओर पुनर्जीवित कर रहे हैं। यह प्रबंधन सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के मूल-बिंदु की व्याख्या करता है।

इस बदलाव के लिए सैद्धांतिक आधार, (नव लोक प्रबंधन) मॉडल द्वारा प्रेरित, साहित्य के कई अंतःसंबंधित किस्मों द्वारा प्रदान किया जाता है, मुख्य रूप से नव दक्षिणपंथी विचारधारा, लोक चयन दृष्टिकोण और प्रधान ऐजेंट संबंध द्वारा।

नव दक्षिणपंथी विचारधारा (New Right Philosophy)

1970 के दशक में शिकागो विश्वविद्यालय में वित्तीय कार्यों से जुड़े एक समूह को पहली बार 'नव दक्षिणपंथी' विचारधारा की परिभाषा प्रदान की गई थी। 'द न्यू राइट स्कूल ऑफ थॉट' अर्थात दक्षिणपंथी विचारधारा जिसका मूलभूत तत्व यह था कि, सरकार अर्थव्यवस्था में किसी तरह की दखलंदाजी नहीं करेगी क्योंकि इससे बाजार में विकृतियों का निर्माण होता है जो प्रतिकूल परिणाम उत्पादित करता है। यह मोटे तौर पर आग्रह करता है कि बाजार में राज्य की बढ़ती भागीदारी एकाधिकार की ओर ले जाती है, बजट बढ़ाता है, उद्यमशीलता पर दबाव पड़ता है, पसंदीदा चीजों को सीमित करता है, अवांछित सेवाओं का जरूरत से ज्यादा विस्तार होता है, और अपव्ययता और अक्षमता को प्रोत्साहन मिलता है। इस दृष्टिकोण से देखें तो नव दक्षिणपंथी सिद्धांत अर्थव्यवस्था में सरकार को निर्माता और नियंत्रक के रूप में भूमिका के पक्ष में बलपूर्वक तर्क प्रदान करता है। इसलिए, निजीकरण और अनियमितीकरण, नव दक्षिणपंथी की सुधारसूची के 6 अंकों में से हैं। सार्वजनिक सेवाओं, संस्थागत और संवैधानिक सुधारों के प्रावधान में अन्य कार्यवाही के मापक हैंः मुद्रास्फीति में कमी, कम कराधान, और साथ ही लोक सेवा में बाजार की बढ़ती भूमिका और संस्थात्मक और संवैधानिक सुधार।

नव दक्षिणपंथी विचारधारा ने व्यक्तिगत अधिकारों और चयन के मूल्यों को हमेशा ही प्रधानता दी है। इस विचारधारा के समर्थको ने आर्थिक धन और रोजगार के सृजन में बाजार को एक महत्वपूर्ण भूमिका सौपीं है।

लोक चयन दृष्टिकोण (Public Choice Approach)

लोक चयन दृष्टिकोण के समर्थकों का मानना है कि, लोक सेवाओं की गुणवत्ता में गिरावट की ज्यादातर जिम्मेदारी नौकरशाही पर है। नौकरशाही का संबंध सत्ता की अधिकतम प्रवृत्ति से है और राजनीतिज्ञ मतदान के अधिकतम-कर्ता माने जाते हैं। इससे अपने स्वयं के हितों को पूरा करने के लिए सार्वजनिक व्यय बढ़ता है।इस पर एक आधारभूत पक्ष यह है कि प्रबंधक हो या ग्राहक दोनों ही किसी भी चीज की उपयुक्तता का अधिकतम स्तर ढूंढते हैं जिससे वे हमेशा शुद्ध लाभ पाना चाहते हैं। लोक चयन दृष्टिकोण लोक प्रशासन के अध्ययन के तीन महत्वपूर्ण दृष्टिकोणों पर सवाल करता हैं, जो हैं–विलसोनियन का राजनीतिक-प्रशासन विरोधाभास; वेबेरियन नौकरशाही; और हर्बर्ट साइमन का तार्किक फैसले लेने का मॉडल। मोटे तौर पर, लोक चयन दृष्टिकोण की नीति सिफारिशे निम्नलिखित हैं:

i. राज्य की भूमिका को न्यूनतम करना;

ii. राजनेताओं की विवेकाधीन शक्तियों को सीमित करना;

iii. सार्वजनिक एकाधिकार को न्यूनतम करना; और

iv. सरकारी एजेंसियों के कार्यों पर नियंत्रण रखना।

सरकारी गतिविधियों की व्यापकता पर लोक चयन दृष्टिकोण का प्रभाव बेहद महत्वपूर्ण रहा है। उदाहरण के लिए, लोक चयन सिद्धांत को मानने वाले सरकारी संस्थाओं को संदेह की दृष्टि से देखते हैं। सरकार की केंद्रीय भूमिका पर सवाल उठाए जाते हैं। बाजार जैसी व्यवस्था के विकेंद्रीकरण को नौकरशाही की बाध्यता और प्रभाव के विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। विकेंद्रीकरण लोकतांत्रिक प्रशासन और व्यवस्था आधारित प्रतियोगिता को बढ़ावा देना लोक चयन दृष्टिकोण का एक महत्वपूर्ण संगठनात्मक पूर्वानुमान है। ब्यूकॉनैन और ट्यूलॉक (Buchanan and Tullock) का मानना है कि, विकेंद्रीकरण सरकारी संस्थाओं में प्रतियोगिता के अवसर को बढ़ावा देगा और इस प्रक्रिया में व्यक्तिगत नागरिकों द्वारा चयन भी बढ़ेगा।

लोक चयन दृष्टिकोण ने एक नए प्रशासनिक ढांचे का आधार रखा है जो बाजार की प्रतियोगिता और कुशलता की अवधारणा के अनुसार सरकारी कामकाज को सुदृढ़ करने का पुरज़ोर समर्थन करता है।

संपत्ति पर अधिकार का सिद्धांत (Property Rights Theory)

संपत्ति पर अधिकार का सिद्धांत निजी क्षेत्र में प्रदर्शन के लिए मौजूद प्रोत्साहन और यदि उन्हें सार्वजनिक क्षेत्र में पेश किया जाए इसे समझने का एक तरीका प्रदान करता है। डनसायर (Dunsire) के अनुसार, ''केंद्रीय तर्क यह है कि निजी क्षेत्र के संगठन, जिसमें लाभ के अधिकार को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है, जो सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना में बेहतर प्रदर्शन करेंगे,, जहां अधिकार विसरित और अनिश्चित होते है'' । इस प्रकार निजीकरण, जो निजी स्वामित्व के पक्ष में संपत्ति के अधिकारों में परिवर्तन को मजबूर करता है, दक्षता को बढ़ावा देने के लिए लोभ दायक माना जाता है।

प्रधान एजेंट सिद्धांत (Principal-Agent Theory)

संपत्ति पर अधिकार में बदलाव किसी भी संस्था, उद्योग के मालिक और प्रबंधन के बीच के संबंधों में बदलाव लाता है।इस घटना को समझने के लिए निजीकरण के समर्थक प्रधान सिद्धांत पर निर्भर करते हैं। इस सिद्धांत के मुताबिक मालिक प्रधान (Principal) है और प्रबंध एजेंट (Agent) है। एजेंट से यह उम्मीद की जाती है कि वह प्रिंसिपल के लक्ष्यों का अनुसरण करे।

प्रधान एजेंट सिद्धांत सामाजिक और राजनीतिक जीवन के अनुभव पर आधारित होता है। एजेंट प्रधान की ओर से विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए काम करने पर सहमत होता है और बदले में, प्रधान आपसी समझौते पर आधारित इनाम वेतन देने पर सहमत होता है। अनुबंध की रूपरेखा प्रधान तैयार करता है जिसमें नौकरी के लिए जरूरी विशेष ज्ञान, विशेषज्ञता और क्षमता तय की जाती है। एजेंट एक अनुबंधित संबंध में होता है। वह ऐसे फैसले लेता है जो प्रधान को प्रभावित करें और इस तरह से काम करें जो प्रधान द्वारा तय लक्ष्य को अधिकतम स्तर पर पा सकने में योगदान दे।

इन सैद्धांतिक पूर्वानुमानों ने नव लोक प्रबन्धन की नींव रखी है। इसका लोक प्रशासन पर बड़ा प्रभाव पड़ा है, जिससे अधिक प्रबंधकीय अभिविन्यास पर ध्यान केंद्रित हुआ है। इस प्रकार यह सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की अवधारणा को लोकप्रिय बनाता है।

1.4 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः स्वरूप

पिछले कुछ वर्षो में, शासन के राजनीतिक और प्रशासनिक तरीके नागरिकों के हितों और राज्य की भूमिका में तालमेल बैठाने पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। लोक प्रशासन में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के उद्‌भव ने शासन के विचार को पूरी तरह एक नया आयाम दिया है। यह सार्वजनिक संस्थाओं के कार्यों में निम्नलिखित बदलाव लाता है, नामतः

- प्रत्यक्ष प्रावधान के अतिरिक्त सरकार की संचालन भूमिका।
- परिस्थितियों के अनुसार संगठनात्मक कामकाज में लचीलापन।
- परिणामों और नतीजों पर ध्यान केंद्रित करना।
- रणनीतिक योजना पर अधिक ध्यान देना।
- निजी क्षेत्र के कर्मियों की प्रथाओं को अपनाना, जैसे प्रदर्शन से जुड़े पारिश्रमिक।
- ग्राहकों की ज़रूरतों के लिए अभिविन्यास।
- सार्वजनिक क्षेत्र की उन गतिविधियों में बाजार क्रियाविधि जिनका निजीकरण नहीं किया जा सकता; और
- दक्षता और लागत में कटौती पर ज़ोर।

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का अनन्य पहलू 'सार्वजनिक क्षेत्र' या 'सार्वजनिकता' होता है।रैनसन और स्टीवर्ट (Ranson and Stewart, 1994), सार्वजनिक क्षेत्र (Public Domain) की एक खास बात पर ज़ोर देते हैं, जिससे वे बिलकुल संदेह नहीं करते कि यह निजी प्रशासन के सिद्धांतों को कम कर सकता है।

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन सार्वजनिक संगठन में लक्ष्य प्राप्त करने के लिए ज्यादा व्यावहरिक तरीका प्रदान करती है। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधक उद्यमी बन जाते हैं और नौकरशाही के माध्यम से सरकारी सेवाओं की आपूर्ति के लिए रचनात्मक तरीके विकसित करते हैं, साथ ही साथ निजी क्षेत्रों द्वारा दूसरे अन्य माध्यमों से सेवा प्रदान करते हैं। यह ज्यादा रचनात्मक और प्रभावशाली हो सकता है। आधुनिक सरकारें लोगों को कम से कम प्रशासनिक कीमत पर कुशल सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए प्रबंधन को महत्व दे रही हैं। प्रबंधन का अर्थ सरकार के तकनीकी विशेषज्ञों के द्वारा जवाबदेही को कम करना या लोकतंत्र का घटाव नहीं है। इसके स्थान पर प्रबंधन, सरकार को सार्वजनिक सेवा अधिक कुशलता और कम लागत पर उपलब्ध कराने का अवसर प्रदान करता है। यह प्रबंधकों को अधिक सूचनाएं भी मुहैया कराता है, जिससे बेहतर फैसले लिए जा सकें। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन अधिक संवेदनशील, कुशल और कम लागत पर सार्वजनिक सेवाएं उपलब्ध कराने का प्रयास करता है। इसके पास नैतिक स्थिरता और संगठनात्मक लचीलापन दोनों ही है, जो लोक सेवा में लक्ष्य हासिल करने के लिए ज़्यादा विश्वसनीय होते हैं। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के दृष्टिकोण में शामिल हैं–अधिक भागीदारी, लचीलापन, आंतरिक रूप से निश्क्रियता, और बाह्य रूप से बाजार तंत्र का उपयोग। इसका उद्देश्य आदानों के लिए लेखांकन के बजाय परिणामों के माप के माध्यम से जवाबदेही हासिल करना है।

बोध प्रश्न–1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. लोक चयन सिद्धांत की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

2. सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के परिणामों का स्पष्टीकरण कीजिए।

....

....

....

....

1.5 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः कार्यक्षेत्र

पारंपरिक सार्वजनिक प्रशासनिक आदर्श की परिभाषित विशेषताएं औद्योगिक युगीन सरकार का एक उत्पाद हैं। इस आदर्श की महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं, नियमित मानक संचालन प्रक्रियाओं के अनुसार केंद्रीकरण और श्रेणीबद्ध नौकरशाही दूसरी ओर, औद्योगिकीकरण नव लोक प्रबंधन मॉडल की विशेषताओं का एक अलग गुट है जो उत्तर औद्योगिकीकरण (Post Industrial) और सेवा-आधारित अर्थव्यवस्था के लिए अधिक उपयुक्त है। ऊर्ध्वाधर पदानुक्रम

ने क्षैतिज नेटवर्क के लिए रास्ता दिया है, नौकरशाही कम हो रही है और साझा नेतृत्व संरचनाएं उभर रही हैं। बदले हुए संदर्भ में, सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन निम्नलिखित को प्रधानता देता हैः

- निष्पादन से नीति का अंतर करके;
- उत्पादकता– कम राजस्व से अधिक सेवाएं प्राप्त करने के माध्यम से;
- बाजारीकरण– पारंपरिक नौकरशाही संरचनाओं, तंत्र और प्रक्रियाओं को बाजार की रणनीतियों के साथ बदलकर;
- सेवा अभिविन्यास–ग्राहकों की जरूरतों को प्राथमिकता देकर;
- विकेन्द्रीकरण–निचले स्तर और स्थानीय सरकारों के लिए सेवा वितरण जिम्मेदारियों को विकसित करके; और
- परिणामों के लिए जवाबदेही–केवल (निवेश) प्रक्रियाओं और संरचनाओं के बजाय (उत्पाद) और परिणामों पर ध्यान केंद्रित करके।

समकालीन सरकारें निष्पादन पर ज्यादा ध्यान देने का प्रयास कर रही हैं। इसलिए, शासन को प्रबंधन से नियंत्रण हटाने की आवश्यकता है। सार्वजनिक संस्थाओं की प्रकृति उद्यमशील, लक्ष्य की ओर ले जाने वाली, और सेवा मुक्त होनी चाहिए। सार्वजनिक प्रणाली के प्रबंधक किसी भी तरह के खतरे को उठा सकने वाले होने चाहिए, जो दूसरे किस्म के संगठनों को भी हिस्सेदार बनाने का निमंत्रण दे सकें, साथ ही प्रदर्शन के आधार पर प्रतिफल दे सके। इस परिदृश्य में, सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का कार्यक्षेत्र शासन के निम्न क्षेत्रों पर कारगर हैः

- परिणाम हासिल करने पर ध्यान केन्द्रित करने की बजाय प्रक्रियाओं को प्राथमिकता देना।
- सार्वजनिक क्षेत्र में वस्तुएं और सेवा उपलब्ध कराने में परिचय करना तथा, प्रतियोगिता और अनुबंध जैसे बाजार के सिद्धांतों को प्रस्तुत करना।
- सेवा के सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए प्रशासन को उपभोक्ताओं के इच्छा अनुरूप बनाना।
- सरकार की भूमिका को संचालक बनाने की बजाय स्वयं संचालित करना, शासन के स्तर पर नीतियों के क्रियान्वयन के लिए गैरलाभकारी संगठन जैसे तीसरे पक्षों को निर्भर बनाना।
- परिणामोन्मुख बनाने के लिए शासन का नियंत्रण कम करना।
- ग्राहकों की सेवा के लिए कर्मचारियों को सशक्त करना जो टीमवर्क को मजबूत बनाएं।
- लोक प्रशासन की संपूर्ण संस्कृति को लचीला, नवीनीकृत, उद्यमशीलता की ओर ले जाना और नियम के घेरे को प्रक्रियान्मुख के प्रतिकूल बनाना, आदानों (Inputs) पर ध्यान न देकर परिणाम पर ध्यान देना; और
- सार्वजनिक प्रणाली में प्रदर्शन के मापन, संस्था को स्वायत्तता और व्यक्तियों की स्वतंत्रता पर ज़ोर देती हुई, उद्यमशीलता, ग्राहकोन्मुख संस्कृति की रचना करना।

बदलते समय के साथ, नव लोक प्रबंधन मॉडल में नए पहलुओं को शामिल किया गया और विद्वानों ने इसे द्वितीय नव लोक प्रबंधन आदर्श संदर्भित किया है। इस द्वितीय नव लोक प्रबंधन मॉडल model के महत्वपूर्ण पहलू हैं:

- एक अधिक विस्तृत और विकसित अर्ध-बाजार प्रणाली (Quasi-Market-System) का परिचय।
- पदानुक्रम के प्रबंधन से अनुबंध के प्रबंधन में परिवर्तन के लिए स्थानीय स्तर पर अधिक खंडित या शिथिल अनुबंधित, सार्वजनिक क्षेत्र के, संगठनों का निर्माण।
- गैर-कार्यनीतिक कार्यों को पूरा करने के लिए मूलभूत और विशाल कार्यनीतियों के बीच अंतर करना।
- विलंब और आकार घटाना या निम्नीकरण (Downsizing)।
- नई प्रबंधकीय अवधारणाओं का परिचय, जो संगठनों का तंत्र और संगठनों के बीच कार्यनीतिक गठबंधन बनाता है।
- अधिक लचीले और विविध सेवा रूपों के लिए मानकीकृत सेवा रूपों से दूर जाना।

सांगठनिक संस्कृति मूल्यों, विज़न/दृष्टि और शिक्षण संगठन की अवधारणा के महत्त्व ने नव लोक प्रबंधन को भी प्रभावित किया था और इसलिए, विद्वानों द्वारा इस सिद्धांत में भी उपयुक्त परिवर्तन करने का सुझाव दिया गया था।

सरल शब्दों में, नव लोक प्रबंधन ने सरकार का ध्यान प्रक्रिया से परिणामों की ओर परिवर्तित कर दिया है। निम्न तालिका में सरकारी कार्यों को करने में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन और पारंपरिक नौकरशाही प्रणाली के मध्य भिन्नता को दर्शाया गया है।

तालिका

	नौकरशाही व्यवस्था	**सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन**
1	लोक सेवा सरकार द्वारा निष्पादित एक विशेष कार्य माना जाता है।	लोक सेवा सरकार, गैर सरकारी संगठनों और निजी क्षेत्र, आदि को सम्मिलित करने वाली एक सहयोगी अभ्यास के रूप में माना जाता है।
2	नागरिक के प्रतिकूल और सरकारी व्यवसाय में गोपनीयता।	नागरिक के अनुकूल, पारदर्शी और जवाबदेह।
3	सार्वजनिक–निजी अंतर।	सार्वजनिक–निजी साझेदारी।
4	कठोर, नियम–बाध्य और श्रेणीबद्ध मॉडल।	लचीली संगठनात्मक रूपरेखा और अभ्यास प्रारूप
5	प्रक्रिया जवाबदेही।	परिणाम जवाबदेही
6	गोपनीय नौकरशाही	जवाबदेह नौकरशाही
7	संरचना–उन्मुख।	जन–उन्मुख
8	निर्णय लेने की प्रक्रिया में तर्कसंगतता पर ज़ोर।	निर्णय लेने की प्रक्रिया में सीमित समझदारी पर जोर।

9	केंद्रीकृत रणनीति को अपनाना।	विकेंद्रीकृत रणनीति को अपनाना।
10	आधिकारिक दृष्टिकोण	सहभागी दृष्टिकोण
11	राजनीति.प्रशासन का विरोधाभास	राजनीति.प्रशासन का मेल
12	संरचनाओं और प्रक्रियाओं पर ध्यान	प्रदर्शन और परिणामों पर ध्यान

उपरोक्त तालिका स्पष्ट रूप से बताती है कि कैसे सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन सरकारी कार्यों को करने में पारंपरिक नौकरशाही प्रणाली से भिन्न है। क्योंकि वर्तमान समय में लोक प्रशासन जटिल हो गया है, इसलिए नागरिकों को कुशल सार्वजनिक सेवाएं प्रदान करने के लिए वैविध्यपूर्ण (बहु–पक्षीय) सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन को नेटवर्किंग तंत्र के साथ काम करने की आवश्यकता है।

1.6 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः विशेषताएं

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन शासन में केंद्रीय अभिकरण के नियंत्रण को कम कर प्रबंधन स्वायत्तता को बढ़ावा देने की वकालत करता है। यह लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रबंधकों को वैयक्तिक और तकनीकी स्रोत उपलब्ध कराने की अहमियत को मान्यता देता है। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की विशेषता यह है कि, परिणाम प्राप्त करना प्रबंधकों की जिम्मेदारी होती है। इसके अन्तर्गत, राजनीतिज्ञ और प्रबंधन के बीच के संबंध पहले से अधिक दोस्ताना और नज़दीकी होते हैं। यह सरकार के अनिवार्य राजनीतिक चरित्र को अस्वीकार नहीं करता किंतु, एक ही समय में, आगत को संभालने और परिणामोन्मुख दोनों ही संदर्भ में स्वायत्तता की अधिकारपूर्वक मांग करता है। दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है कि, ग्राहक और जनता की पसंद को पहचानने की जवाबदेही प्रबंधक की होती है। इसलिए सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन में उपभोक्तापरक और व्यक्ति और बाहरी समूहों के प्रति अधिक जवाबदेही होती है। इस प्रणाली में निम्नलिखित विशेषताओं के द्वारा शासन को संगठित करने के पारंपरिक तरीकों में सुधार लाया जा सकता हैः

i) यह उच्च गुणवत्ता वाली सेवा वितरण से संबंधित हैं, जिसको नागरिक अहमियत दे।

ii) यह नागरिकों को सक्रिय उपभोक्ता मानता है और उनकी उम्मीदों और आवश्यकताओं का पता लगाने के लिए गंभीर प्रयास करता है।

iii) कामकाजी परिस्थितियों में अधिक लचीलापन प्रदान करता है, जैसे आनुबंधिक नियुक्ति, काम की जगहों में मोलभाव, अधिक विशेषज्ञता और कर्मचारी रचनात्मकता को प्रयोग में लाने का मौका प्रदान करता है।

iv) यह प्रबंधकीय नेतृत्व के लिए अधिक सकारात्मक और उत्पादक स्थितियां बनाता है, संगठनात्मक संरचनाओं को सरल बनाता है, तथा पदानुक्रम को समतल करता है।

v) यह व्यक्तियों और संगठनों के प्रदर्शन को सख्ती से मापता है।

vi) यह प्रतियोगिता के लिए ग्रहणशील और सार्वजनिक संगठनों के प्रबंधन के प्रति खुले विचारों वाला रवैया अपनाता है।

vii) यह सामुदायिक समस्याओं को सुलझाने और सार्वजनिक सेवाएं प्रदान करने के

लिए सार्वजनिक, निजी, स्वैच्छिक क्षेत्रों के साथ काम करने के लिए सहयोगात्मक और नेटवर्किंग दृष्टिकोण को अपनाता है।

viii) यह प्राधिकरण के विकेंद्रीकरण का समर्थन करता है, इस प्रकार सहभागी प्रबंधन मॉडल को सम्मिलित करता है।

ix) यह नौकरशाही तंत्र के स्थान पर बाजार तंत्र को प्रधानता देता है।

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की विशेषताएँ नई राज्य संस्थाएँ, प्रशासनिक संस्कृति और प्रबंधन कार्यनीतियाँ हैं। यह सरकारी नौकरीशाही के महत्व को कम नहीं करता है बल्कि इसके विपरीत, उसे एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करता है। सार्वजनिक प्रणालियों की विशेषताएं हैं:

- प्रक्रियाओं, नियमों, आदि का पालन करने के बजाय उच्च स्तर की पारदर्शिता और जवाबदेही।
- सभी तरह के काम के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का व्यापक प्रयोग।
- रणनीतिक क्षेत्रों पर राज्य के नियंत्रण के साथ गतिविधियों का विकेंद्रीकरण अनुबंधों और आउटसोर्सिंग।
- नीति बनाने की क्षमता के साथ सिविल सेवकों को नई भूमिका सौंपना, तकनीकी क्षमता का प्रयोग और प्रबंधकीय कौशल।
- प्रोत्साहन प्रणाली, प्रदर्शन मूल्यांकन, वेतन अंतर, आदि के साथ सार्वजनिक प्रणालियों और संगठनों में एक नई कार्य संस्कृति।

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन परिणाम-उन्मुख और उद्देश्य केंद्रित होता है। इसके प्रबल अभिप्रोक तीन-ई इसके प्रधान उद्देश्य होते हैं– मितव्ययता, दक्षता और प्रभावशीलता (Economy, Efficiency and Effectiveness)। संक्षेप में, पीएसएम स्पष्ट बाजार उन्मुखीकरण अपनाता है और निजी क्षेत्र की प्रथाओं पर निर्भर करता है। यह प्रबंधकीय व्यावहारिकता और राजनीतिक विश्वास को मिश्रित करने का उद्देश्य रखता है। यह व्यावसायिकता, निष्पक्षता, उच्च नैतिक मानक और बेहतर प्रदर्शन के साथ भ्रष्टाचार में कमी का वादा करता है।

पीएसएम पर मुख्य आलोचना यह है कि, यह सार्वजनिक हितों को खतरे में रखता है और सरकार पर भरोसा कम कर सकता है। सरकार को न केवल व्यक्तिगत तात्कालिक ग्राहकों या उसकी सेवाओं के उपभोक्ताओं के लिए जवाबदेह होना चाहिए, बल्कि बृहत् सार्वजनिक हित के लिए भी। फ्रेंक डन्लेवी (Frank Dunleavy) जैसे विद्वानों का मानना है कि, एनपीएम ग्राहकों और उनके संस्थानों के साथ वियोजित होने के कारण चरणबद्ध हो रहा है। उन देशों में जो कम औद्योगीकृत हैं, एनपीएम अवधारणा अभी भी बढ़ और फैल रही है। इस प्रवृत्ति को डिजिटल युग के अनुरूप बनाने और अपने सार्वजनिक क्षेत्र को प्राप्त करने के लिए देशों को अपनी क्षमता या असमर्थतता के अनुसार बहुत कुछ करना है।

बोध प्रश्न–2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की नौकरशाही व्यवस्था से भिन्नता को स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

2. सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

1.7 निष्कर्ष

1980 और 1990 के दशकों में विश्व स्तर पर उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं, जैसा कि कई देशों की सरकारों ने खुद को नई तकनीक, नई सामाजिक मांग और गहरी प्रतिस्पर्धा के अनुकूल बनाने की कोशिश की है। इससे लोक प्रशासन में एक नई तरह के अभिविन्यास की तलाश शुरू हुई है जो उसकी सभी प्रणालियों और उप-प्रणालियों में व्यापी है। कठोर, नियम-बद्ध और पदानुक्रम लोक प्रशासन इस गतिशील स्थिति की आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। इस परिप्रेक्ष्य में, निजी क्षेत्र द्वारा अग्रणी बहुत से संगठनात्मक परिरूपों और प्रथाओं को उपयुक्त संशोधनों के साथ सार्वजनिक प्रणाली से परिचित कराया गया है। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन को आज, इस प्रकार, पुनः प्रचलित किया जा रहा है जिससे वेबर की पारंपरिक नियमबद्धता का प्रभाव कम हो, तथा अब परिणामों और लागत प्रभावशीलता पर अधिक ध्यान केंद्रित है।

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन नागरिकों को सक्रिय उपभोक्ता मानता है और सार्वजनिक, निजी और नागरिक समाज संगठनों के साथ सामाजिक समस्याओं का समाधान करने और सार्वजनिक सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए सहयोगात्मक दृष्टिकोण अपनाता है।संक्षिप्त में, सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन लोक सेवा वितरण को–निजी क्षेत्र की बहुत सी प्रबंधन अवधारणाओं और तकनीकों को धारण करके–कुशल, प्रभावी और लाभदायक बनाना चाहता है। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की मुख्य आलोचना यही है कि, सार्वजनिक हितों का खतरे में रखता है और यह सरकार पर विश्वास को कमजोर कर सकता है।

1.8 शब्दावली

नागरिक समाज (Civil Society) : यह नागरिकों के संगठित होने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है। यह सामाजिक संगठनों का वह समूह है जो शासन से स्वायत्तता का आनंद लेता है और खास रुचियों पर ज़ोर देता है। नागरिक समाज समूह के तंत्र को शामिल करता है, जिसमें आर्थिक, निजी, सामाजिक सेवा, विकास और पेशेवर संगठन शामिल होते हैं।

नौकरशाही विहिनीकरण (Debureaucratisation) : यह संगठन में प्रचलित नौकरशाही को कम किए जाने को अंकित करता है। यह एकाधिकार खत्म करके कुछ अधिकारियों या सरकार में शामिल कुछ राजनीतिज्ञों की ताकत और सत्ता को कम करके दिया जाता है। इसके अलावा यह कई तरह के नागरिक संगठनों को देश के शासन में शामिल होने के लिए बढ़ावा देकर भी हासिल किया जाता है।

नियमितीकरण (Deregulation) : वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा अर्थव्यवस्था के किसी भी क्षेत्र में कुछ इकाइयों के एकाधिकार को कम करके उसे दूसरे भागीदारों के लिए खोला जा सके। भारत में यह सुधार 1990 में लागू हुआ था, अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों जैसे बैंक, दूरसंचार, नागरिक उड्डयन, आदि में ताकि काफी कम कीमत और अच्छी सेवा लोगों को मुहैया कराई जा सके। इन क्षेत्रों को नियम कानून से स्वतंत्र कर ज्यादा स्वायत्तता प्रदान की गई।

नवउदारवाद (Neo-liberalism) : इस विचार को 1950 के दशक के मध्य ब्रिटेन में काफी प्रसिद्धि प्राप्त हुई। इसने खुले बाजार की वकालत की। इसने बाजार के ढांचे की सर्वोच्चता, व्यक्तिक पसंद और स्वतंत्रता को अधिकतम किया और राज्य की कमतर भूमिका को महत्व प्रदान किया। इस विचार ने कल्याणकारी राज्य की भूमिका को प्रचारित किया, जैसा कि कहा जाता था कि यह खुले बाजार की शक्ति को प्रभावित करता है।

1.9 संदर्भ लेख

Arora, R.K. (Ed.). (2001). *Management in Government: Concerns and Priorities.* Jaipur, India: Aalekh Publishers.

Arora, R.K. (Ed.). (2004). *Public Administration: Fresh Perspectives.* Jaipur, India: Aalekh Publishers.

Batley, R. & Larbi, G. (2004). *The Changing Role of Government The Reforms of Public Services in Developing Countries.* London: Palgrave Macmillan.

Bhattacharya, M. (1991). *Restructuring Public Administration: Essays in Rehabilitation.* New Delhi, India: Jawahar Publishers and Distributors.

Bhattacharya, M. (2001). *New Horizons of Public Administration.* New Delhi, India: Jawahar Publishers and Distributors.Periera, B. & Carlos, L. (2004). *Democracy and Public Management Reform: Building the Republican State*. Oxford: Oxford University Press.

Dhameja, A. (Ed.). (2003). *Contemporary Debates in Public Administration.* New Delhi, India: Prentice-Hall of India Private Limited.

Ghumman, B.S. (2001). New Public Management: Theory and Practice. *Indian Journal of Public Administration*. 47(4), 769-779.

Gore, M. & Stubbe, J. (1994). *Contemporary Systems Analysis*. (5th ed.). Dubuque, IOWA: Business and Educational Technologies.

Huges, O.E. (1994). *Public Management and Administration- An Introduction.* New York: St. Martins Press Inc.

Lane, J.E. (2000). *New Public Management*. London: Taylor & Francis Group.

Osborne, S. P. (Ed.). (2002). *Public Management: Critical Perspectives.* London: Routledge.

Sahni, P. & Medury, U. (Eds.). (2003). *Governance for Development: Issues and Strategies.* New Delhi, India: Prentice-Hall of India Private Limited.

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   - लोक चयन सिद्धांत प्रतियोगिता और दक्षता की विपणन अवधारणाओं के परिचय का समर्थन करता है।
   - नौकरशाही का संबंध सत्ता की अधिकतम प्रवृत्ति से है और राजनीतिज्ञ मतदान अधिकतम-कर्ता माने जाते हैं।
   - इससे सार्वजनिक व्यय बढ़ता है और बजट की कमी होती है।
   - लोक चयन सिद्धांत के समर्थक राज्य की भूमिका को न्यूनतम करने, राजनेताओं की विवेकाधीन शक्तियों को सीमित करने, सार्वजनिक एकाधिकार को न्यूनतम करने और सरकारी एजेंसियों के कार्यों पर अंकुश लगाने की सिफारिश करते हैं।

2. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   - प्रत्यक्ष प्रावधान के बजाय सरकार की संचालन भूमिका।
   - परिस्थितियों के अनुसार संगठनात्मक कामकाज में लचीलापन।
   - परिणामों और नतीजों पर ध्यान केंद्रित करना।
   - कार्यनीतिक योजना पर अधिक ध्यान देना।
   - निजी क्षेत्र के कर्मियों की प्रथाओं को अपनाना।
   - ग्राहकों की जरूरतों के लिए अभिविन्यास।

बोध प्रश्न-2

1. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   - सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन नौकरशाही प्रणाली से इस प्रकार भिन्न होता हैः

     क) सहयोगी

     ख) नागरिकों के अनुकूल, पारदर्शी, जवाबदेह

     ग) लोग उन्मुख

     घ) भागीदारी

     ड़) प्रदर्शन और परिणाम उन्मुख

2. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   - उच्च गुणवत्ता वाली सेवा का वितरण जिसका नागरिक सम्मान करें।
   - कामकाजी परिस्थितियों में अधिक लचीलापन।
   - व्यक्तियों और संगठनों का सख्त प्रदर्शन माप।
   - काम करने के लिए सहयोगात्मक और नेटवर्किंग दृष्टिकोण।
   - नौकरशाही तंत्र के स्थान पर बाजार तंत्र।
   - प्राधिकरण का विकेंद्रीकरण।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन: सवैंधानिक संदर्भ*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 सार्वजनिक प्रणाली का संवैधानिक परिवेश

2.3 संवैधानिक प्राधिकरण और आयोग

- 2.3.1 भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक
- 2.3.2 वित्त आयोग
- 2.3.3 चुनाव आयोग
- 2.3.4 संघ लोक सेवा आयोग
- 2.3.5 भारत के महान्यायवादी
- 2.3.6 राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग
- 2.3.7 राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग
- 2.3.8 राजभाषा आयोग
- 2.3.9 भाषाई अल्पसंख्यक आयोग
- 2.3.10 प्रशासनिक अधिकरण
- 2.3.11 लोक सेवा

2.4 अन्य महत्वपूर्ण आयोग

- 2.4.1 राष्ट्रीय महिला आयोग
- 2.4.2 राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग
- 2.4.3 राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग और राज्य मानव अधिकार आयोग

2.5 निष्कर्ष

2.6 शब्दावली

2.7 संदर्भ लेख

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्न को समझ सकेंगे:

- सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन की प्रासंगिक उपयुक्तता के महत्व;
- भारत में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के संवैधानिक वातावरण; और
- संवैधानिक प्राधिकरण और आयोग, जो सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, उनकी चर्चा।

*योगदानः डॉ. सी. एच. सी. प्रसाद, सहायक निदेशक, डॉ. बी. आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

2.1 प्रस्तावना

जैसा कि लोक प्रशासन पर फ्रेड रिम्स ज़ोर देकर कहते हैं कि यह परिवेश से प्रभावित होता है। प्रत्येक प्रणाली एक दिए हुए परिवेश में कार्य करती है और विभिन्न नीति-निर्धाण के मुद्दे, समस्याएं जो कि क्रियान्वयन, लागू करने अथवा मूल्यांकन के समय सामने आती हैं, उनके अनुसार ही अपनी प्रासंगिक कार्यशैली तय करती है। राज्य की प्रकृति, नीति के प्रकार, अनेक सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाओं की भूमिका, संस्कृति, सिद्धांत और मूल्यों आदि सार्वजनिक प्रणाली के निष्पादन और क्रिया में विशेष भूमिका निभाती है। दूसरे शब्दों में, ये सभी अस्थिरताएं और शक्तियां सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के संदर्भगत व्यवस्था के अंग है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रौद्योगिकीय और संवैधानिक घटक एक संदर्भित व्यवस्था है जिसके अधीन सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन को कार्य करना होता है। इसलिए, सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन इन संदर्भित कारकों और शक्तियों की उपेक्षा नहीं कर सकता।

इस इकाई में हम अपनी चर्चा भारत में सार्वजनिक प्रबंधन प्रणाली के संवैधानिक परिवेश का विश्लेषण करने तक ही सीमित रखेंगे।

2.2 सार्वजनिक प्रणाली का संवैधानिक परिवेश

आधुनिक सरकारें संवैधानिक सरकारें हैं। संविधान भूमि का मूलभूत कानून है। यह न केवल सरकार के संस्थानों की स्थापना करता है बल्कि राज्य (State) के लक्ष्यों को भी निर्धारित करता है। आधुनिक संविधान बहुत विस्तृत दस्तावेज़ है, जो कि सरकार की तीन शाखाओं, कार्यपालिका, विधानपालिका और न्यायपालिका के वर्णन से कहीं आगे तक जाती हैं। सार्वजनिक प्रणाली संवैधानिक ढांचे के अंतर्गत कार्य करती है और इससे ही शक्तियां प्राप्त करती है। परन्तु, ऐसा देखा गया है कि कानूनी और संवैधानिक ढांचा जिसके अंतर्गत किसी भी देश की सार्वजनिक प्रणाली कार्य करती है वह इन व्यवस्थाओं की वास्तविक तस्वीर नहीं दिखाती। हालांकि, मुख्य संवैधानिक प्रावधानों से संबंधित सार्वजनिक प्रणाली के कार्य और उन विभिन्न प्राधिकारणों को और उन आयोगों को अच्छे से समझ लेना चाहिए जिन्हें संविधान में संवैधानिक लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए रखा गया है। संवैधानिक सिद्धांत, संस्थान और निकाय सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के परिवेश को निर्धारित और प्रभावित करते हैं।

शासन, जिसका राजनीतिक संदर्भ में अर्थ है संवैधानिक संस्थाओं और स्वरूपों में निहित कानून की शक्ति और अधिकारों का प्रयोग कर राज्य के स्वीकृत लक्ष्यों को प्राप्त करना। भारत में शासन व्यवस्था कुछ ऐसे मूलभूत उद्देश्यों की प्राप्ति को ध्यान में रखकर बनायी गई है जिन्हें योजनाकारों ने देश के संविधान के प्रकाश में रख कर बनाया। ऐसे उद्देश्यों के संदर्भ में सार्वजनिक प्रणाली को प्रबंधित करना होगा। इन व्यवस्थाओं का विशेष बल आत्मनिर्भरता, आर्थिक विकास, औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण और सामाजिक न्याय पर है। भारतीय संविधान केवल एक ऐसा दस्तावेज़ नहीं है जो संघ और राज्यों के दायित्वों और अधिकारों की बात करता है, यह शासन के मूल दर्शन को भी शामिल करता है और देश के प्रशासन के लिए एक तरह के दिशा-निर्देश भी प्रदान करता है। भारतीय संविधान की निम्नलिखित विशेषताएं विस्तृत रूप से उस परिवेश को निर्धारित करती है जिसमें सार्वजनिक प्रणाली की गतिविधियों को कार्य करना चाहिए:

- प्रस्तावना

- संसदीय लोकतंत्र
- सुदृढ़ केंद्रीय संघ
- मौलिक अधिकार और कर्तव्य
- राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत
- स्वतंत्र न्यायपालिका
- न्यायिक समीक्षा

प्रस्तावना (Preamble)

प्रस्तावना संवैधानिक शासन के मुख्य दर्शन का परिचयात्मक विवरण है। यह अधिकार स्रोत, शासन की व्यवस्था, राजनीतिक और प्रशासनिक व्यवस्था के द्वारा प्राप्त किए जाने वाले लक्ष्य और संविधान के अधिनियमन और अपनाने की तिथि को चिन्हित करता है। यह भारत को संप्रभुता सम्पन्न, सामाजिक, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणतंत्र घोषित करता है और सभी नागरिकों को न्याय, स्वाधीनता, समानता, बंधुत्व की सुरक्षा प्रदान करता है। इसमें बुलंद आदर्श शामिल हैं जो प्रकाश की तरह देश की सरकार के मार्गदर्शन के लिए ध्रुवतारे की तरह ही कार्य करते हैं। केशवानन्द भारती मामले में उच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि प्रस्तावना भी संविधान का ही एक भाग है।

संसदीय लोकतंत्र (Parliamentary Democracy)

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था आधुनिक उदार लोकतंत्र के मूल्यों का रचनात्मक उदाहरण है। भारत के संवैधानिक इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण विकास संसदीय सरकार की स्थापना है जो कि वेस्टमिन्सटर (Westminster) प्रारूप के बहुत समान है। सरकार की इस व्यवस्था में जो कार्यपालिका होती है संसद का ही एक भाग होती है और इसके प्रति उत्तरदायी होती है।

सुदृढ़ केंद्रीय संघ (Federation with Strong Centre)

संविधान भारत को ''राज्यों के संघ'' के रूप में वर्णित करता है, हालांकि, सरकार की व्यवस्था संघीय है। यद्यपि 'संघ' शब्द का प्रयोग संविधान में कहीं भी नहीं किया गया है, परन्तु एक संघीय सरकार की सभी मूल विशेषताओं को संविधान में शामिल किया गया है।

किसी भी देश में संघीय प्रकृति देश की आवश्यकताओं पर आधारित होती हैं। भारत में जिन परिस्थितियों में संघीय व्यवस्था विकसित हुई उसमें एक सुदृढ़ केंद्र का होना आवश्यक था। भारतीय संघीय व्यवस्था को संघ के क्षेत्र में एक नया प्रयोग कहा जा सकता है जिसमें एक ओर राष्ट्रीय एकता पर ज़ोर है तो वहीं दूसरी ओर क्षेत्रीय स्वायत्तता पर।

मौलिक अधिकार और कर्तव्य (Fundamental Rights and Duties)

मौलिक अधिकार और मौलिक कर्तव्य संविधान के क्रमशः भाग III और भाग IV में सम्मिलित किए गए हैं। पहले वाला मूलरूप से संविधान के निर्माण में ही सम्मिलित किया गया था, जबकि दूसरा मौलिक कर्तव्य, 1974 में 42वें संशोधन अधिनियम के एक भाग के रूप में सम्मिलित किया गया। मौलिक कर्तव्य गैर-न्यायिक हैं। संविधान का भाग III मौलिक अधिकारों से संबंधित है, जिसमें 24 अनुच्छेद हैं, जो कि संविधान के अनुच्छेद 12 से अनुच्छेद 35 तक हैं। इन अधिकारों को छः समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

1) समानता का अधिकार

2) स्वतंत्रता का अधिकार

3) शोषण के विरूद्ध अधिकार

4) धार्मिक स्वत्ंत्रता का अधिकार

5) सांस्कृतिक और शिक्षा का अधिकार

6) संवैधानिक उपचारों का अधिकार

हालांकि, ऊपर वर्णित अधिकार पूर्ण नहीं हैं। राज्य इन पर उचित प्रतिबंध लगा सकता है। राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान अधिकारों की प्रभावशीलता को स्थगित कर सकता है।

राज्य के नीति निदेशंक सिद्धांत (Directive Principles of State Policy)

संविधान के भाग IV में कई अनुच्छेद (36 से 51 तक) राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत से संबंधित हैं। ये अनुच्छेद व्यक्ति विशेष के अधिकारों और लाभों को प्रोत्साहन देने में राज्य के उत्तरदायित्वों को दर्शाते हैं और यह वास्तविक जीवन में संविधान के आधारभूत मूल्यों की भी व्याख्या करते हैं। कुछ ऐसे ही नीति निदेशक सिद्धांत जो राज्य को सौंपे गए हैं वे निम्नलिखित हैं:

क) जन कल्याण को बढ़ावा देना और सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षा देना;

ख) समान न्याय सुनिश्चित करना और गरीब को निशुल्क कानूनी सहायता देना;

ग) ग्राम पंचायत के गठन के लिए उचित कदम उठाना और उन्हें ऐसी शक्तियां देना जिससे कि उन्हे स्व-सरकार के एक भाग के तौर पर कार्य करने में सक्षम बनाये जा सके;

घ) भारत के पूर्ण क्षेत्र में एक समान नागरिक संहिता सुदृढ़ करने का प्रयास करना।

उपरोक्त निर्देश सरकार के विधायी और कार्यकारी स्कंध की निर्देशन की प्रकृति में से है, ताकि कानून और राज्य की नीति निमार्ण क्रिया के दौरान इनको ध्यान में रखा जाए। इनमें से अधिकतर का उद्देश्य आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र की स्थापना करना है, जिसकी प्रस्तावना में शपथ ली गई है।

नीति-निदेशक सिद्धांत न्यायालय द्वारा लागू नहीं किए गए हैं। ये नैतिक मूल्य हैं और न्यायालय संविधान की व्याख्या में इन्हें निरंतर शामिल करते रहे हैं।

स्वतंत्र न्यायपालिका (Independent Judiciary)

भारत में संघ और राज्यों दोनों के लिए एकीकृत न्यायालयों की व्यवस्था है। इस पूरी व्यवस्था का शीर्ष भारत का सर्वोच्च न्यायालय है। सर्वोच्च न्यायालय के अधीन उच्च न्यायालय और अधीनस्थ न्यायालय आते हैं। भारत के राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायधीशों की नियुक्ति करते हैः परन्तु उनकी स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के लिए उनकी सेवा के नियम और शर्तें संविधान द्वारा नियमित होते हैं।

न्यायिक समीक्षा (Judicial Review)

न्यायिक समीक्षा न्यायालयों की उन शक्तियों के बारे में सूचित करती है जो सार्वजनिक प्राधिकरणों की कार्यकारी और विधायी दोनों कार्यों की संवैधानिक वैधता को घोषित करती है। 'न्यायिक समीक्षा' की अभिव्यक्ति संविधान में नहीं है परन्तु इसकी प्राप्ति न्यायतंत्र के

विभिन्न प्रावधानों द्वारा की गई है। भारत में न्यायतंत्र के पास संविधान की व्याख्या करने और संविधान के अलग-अलग अंगों से उसके संबंध निर्धारित करने की शक्ति है।

संविधान की अन्य महत्वपूर्ण विशेषताओं में एकल नागरिकता, द्विसदनीय विधानसभा, अल्पसंख्यकों, अनुसूचित जाति और जनजातियों के लिए विशेष प्रावधान सम्मिलित हैं। अनपेक्षित मजबूरियों के कारण उत्पन्न हुई आपातकालीन परिस्थितियों से निपटने के लिए विस्तृत प्रावधानों को भी शामिल किया गया है। संघ लोक सेवा आयोग और चुनाव आयोग जैसे विशेष आयोगों को भी संवैधानिक स्तर प्रदान किया गया है।

अब तक भारतीय संविधान में लगभग 104 बार संशोधन किया गया है। भारतीय लोकतंत्र के वर्तमान गठबंधन युग में संविधान में संशोधन बहुत अधिक जटिल और कठिन कार्य बन गया है।

2.3 संवैधानिक प्रधिकरण और आयोग

भारत के संविधान में विभिन्न प्राधिकरणों और आयोगों के गठन के लिए अनेक प्रावधान हैं, जो कि सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। यह इन्हें स्वतंत्रतापूर्वक, पक्षपातरहित और कार्यपालिका से प्रभावति हुए बिना कार्य करने के हेतु सक्षम बनाने के लिए प्रावधानों को शामिल करता है। ये संस्थाएं अपने व्यवहार और कार्यों द्वारा पूर्ण उद्देश्यपरकता और स्वतंत्रता का प्रदर्शन करती हैं। भारत का संविधान निम्नलिखित प्राधिकरणों और आयोगों का वर्णन करता है:

1) भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (अनुच्छेद 148-157)
2) चुनाव आयोग (अनुच्छेद 324)
3) संघ लोक सेवा आयोग (अनुच्छेद 315-323)
4) भारत के महान्यायवादी (अनुच्छेद 76)
5) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (अनुच्छेद 338)
6) राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (अनुच्छेद 338 क)
7) राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग(अनुच्छेद 338 ख)
8) राष्ट्रीय भाषाई अल्पसंख्यक आयोग (अनुच्छेद 350 ख)
9) वित्त आयोग (अनुच्छेद 280-1)
10) राजभाषा आयोग (अनुच्छेद 344)
11) राजभाषा आयोग की रिपोर्ट की जांच के लिए संसदीय समिति (अनुच्छेद 344 (4))
12) राज्य लोक सेवा आयोग (अनुच्छेद 315-323)
13) भारत के महाधिवक्ता (अनुच्छेद 165)
14) प्रशासनिक न्यायाधिकरण
15) राज्य वित्त आयोग
16) लोक सेवा

इनमें से कुछ केंद्रीय और राज्य सरकार के स्तर पर स्वतंत्रतापूर्वक कार्य कर रहे हैं, जबकि अन्य सरकार के दोनों स्तर पर समान हैं। ये हैं:

क) भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक

ख) चुनाव आयोग

ग) वित्त आयोग

अन्य संस्थान और निकाय या तो केंद्र से संबंधित होते हैं या फिर राज्य से। केंद्र सरकार के अधीन आने वाले निकाय निम्नलिखित हैं:

क) संघ लोक सेवा आयोग

ख) भारत के महान्यायवादी

ग) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग

घ) राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग

ड.) राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग

च) राजभाषा आयोग

छ) राजभाषा आयोग की रिपोर्ट की जांच के लिए संसदीय समिति; और

ज) राष्ट्रीय भाषाई अल्पसंख्यक आयोग

यहां पर राज्य के एकमात्र क्षेत्र में केवल दो निकाय आते हैं, जिनका नाम है, राज्य लोक सेवा आयोग और राज्य के महाधिवक्ता। इन प्राधिकरणों और आयोगों में से कई स्थाई प्रकृति के हैं जबकि कुछ समय-समय पर गठित किए जाते हैं।

प्राधिकरण जैसे भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक, संघ लोक सेवा आयोग, भारत के महान्यायवादी, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष अधिकारी, भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी, राज्य लोक सेवा आयोग और राज्य के महाधिवक्ता आदि स्थिर प्रकृति के हैं।

वित्त आयोग, राजभाषा आयोग और राजभाषा आयोग की रिपोर्ट की जांच के लिए संसदीय समिति का गठन समय-समय पर किया जाता है। ऐसा भी देखा जाता है कि कुछ संवैधानिक प्राधिकरणों की बहु-सदस्यता है जबकि कुछ की एकल सदस्यता है। इसके अतिरिक्त, यहां पर कुछ अन्य विशेष आयोग भी हैं जिनकी रचना संसद के अधिनियमों द्वारा की गई है जैसे कि राष्ट्रीय और राज्य मानव अधिकार आयोग आदि। निम्नलिखित उपखंडों में कुछ संवैधानिक प्राधिकरणों और संस्थाओं पर चर्चा करेंगे।

2.3.1 भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक

भारतीय लोकतंत्र में नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (Comptroller and Auditor General of India) (सी. एंड ए.जी.) का एक विशिष्ट स्थान है। इसका गठन संविधान के अधिनियम, 1950 द्वारा किया गया था। यह एक संवैधानिक प्राधिकरण है जिसका दायित्व केंद्र, राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों के वित्तीय लेन-देन का लेखापरीक्षा करना है।

राष्ट्रपति अपने हाथ के अधिपत्र और मुहर द्वारा सी. एंड ए.जी. की नियुक्ति करता है। इनका कार्यकाल छः वर्ष का होता है या उनकी 65 वर्ष की आयु तक इनमें से जो भी पहले हो।

सी. एंड ए.जी. को उनके पद से केवल दो आधार पर हटाया जा सकता है, दुराचार या फिर असक्षमता सिद्ध होने पर। पद से हटाए जाने की प्रक्रिया बहुत ही जटिल है और कार्यपालिका के हस्तक्षेप के विरूद्ध एक प्रभावी सुरक्षा में कार्य करती है। संविधान यह सुनिश्चित करता है कि नियुक्ति के पश्चात प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उनके वेतन और कार्य की शर्तों में परिवर्तन नहीं किया जाएगा। सी. एंड ए.जी. के वेतन और भत्तों का भुगतान भारत की संचित निधि से किया जाएगा।

भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के कर्तव्य और शक्तियों का वर्णन संसद के अधिनियम, नियंत्रक और महालेखापरीक्षक अधिनियम, 1971 (कर्तव्य और कार्य की शर्तें) में किया गया है। केंद्र सरकार के कुछ विशेष विभागों में लेखाँकन और उसके परीक्षण के पृथक्करण के साथ, नियंत्रक और महालेखापरीक्षक का इन विशेष विभागों के लेखाँकन के अनुरक्षण का दायित्व समाप्त हो गया, तब से इन विभागों में अलग से लेखा अधिकारी मौजूद हैं। 1976 में, भारत सरकार ने लेखापरीक्षा कार्य को अपने प्रशासनिक मंत्रालय / विभाग के अधीन ले लिया था, जिसके परिणामस्वरूप लेखाँकन और उसके परीक्षण का पृथक्करण पूर्ण हुआ। सी. एंड ए.जी. लेखापरीक्षा से संबंधित निम्नलिखित कार्य करते हैं:

- केंद्र और राज्यों की आपात निधि और सार्वजनिक लेखों से संबंधित लेन-देन।
- केंद्र या राज्य के किसी भी विभाग में रखे गए सभी व्यापार, विनिर्माण, लाभ और हानि लेखा, तुलन पत्र और अन्य सहायक लेखों; और प्रत्येक मामले में व्यय, लेन-देन या लेखापरीक्षा किए गए लेखों से संबंधित प्रत्येक मामलों की रिपोर्ट करना।
- केंद्र और राज्य के राजस्व से मूलतः वित्तपोशित निकायों या प्राधिकरणों की पावतियां और व्यय।
- याचिका द्वारा अन्य किसी भी निकाय या प्राधिकरण के लेख का।

अपने दायित्वों को निभाने के लिए उनको भारतीय लेखा और लेखा विभाग द्वारा सहायता दी जाती है।

भारतीय संविधान में सी. एंड ए.जी. द्वारा लेखापरीक्षा रिपोर्टों को प्रस्तुत करने के लिए पूरी प्रक्रिया का वर्णन किया गया है। केंद्रीय सरकार के लेखों के संदर्भ में सी एंड ए.जी. द्वारा रिपोर्ट राष्ट्रपति को सौंपनी होगी। राज्य सरकारों के लेखों की रिपोर्ट राज्यपाल को सौंपी जाएगी। इसके बदले में, राष्ट्रपति / राज्यपाल इन लेखापरीक्षा रिपोर्टों को क्रमशः संसद / राज्य विधानसभा के समक्ष रखते हैं।

सी. एंड ए.जी. न तो संसद का कोई अधिकारी है और न ही सरकार का कोई कार्यकारी। यह सबसे महत्वपूर्ण संवैधानिक पदों में से एक है, जो कि सरकार में वित्तीय प्रमाणिकता के उच्चतम स्तरों को सुरक्षित करने के उद्देश्य से स्थापित किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 148 में अनेक प्रावधान हैं जिनका उद्देश्य भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक की स्वतंत्रता को सुनिश्चित करना है। इस अनुच्छेद की कुछ मुख्य विशेषताएं हैं:

1) उसे केवल राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश से ही हटाया जा सकता है जो कि संसद के प्रत्येक सदन द्वारा निवेदित हो, जिसे उस सदन की कुल सदस्यता का बहुमत प्राप्त हो। बहुमत उस सदन में उपस्थित मतों के दो-तिहाई से कम नहीं होनी चाहिए। तत्पश्चात, पद से हटाने के लिए इसे उसी सत्र में राष्ट्रपति के समक्ष रखा जाना होगा।

2) कार्यकाल के नियम और शर्तें सुरक्षित किए गए हैं जिन्हें नियुक्ति के पश्चात उनकी किसी भी प्रतिकूल परिस्थितियों में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

3) ये यह भी बताता है कि अपने कार्यकाल की समाप्ति के बाद सी. एंड ए.जी. भविष्य में कभी भी न तो भारत सरकर और न ही किसी राज्य सरकार के अधीन किसी भी नियुक्ति के योग्य होंगे।

4) सी. एंड ए.जी. के कार्यालय का प्राशासनिक व्यय का भुगतान भारत की संचित निधि से किया जाएगा।

इन सभी प्रावधानों से यही निष्कर्ष निकलता है कि सी. एंड ए.जी. संविधान के एक अधिकारी हैं और इसके लिए बिना किसी भय और पक्ष के कार्य करेंगे।

2.3.2 वित्त आयोग (Finance Commission)

संविधान के अनुच्छेद 280 में राष्ट्रपति द्वारा प्रत्येक पांच वर्ष में वित्त आयोग (Finance Commission) के गठन करने का प्रावधान है। अब तक पंद्रह वित्त आयोग गठित हो चुके हैं। आयोग में एक अध्यक्ष और चार अन्य सदस्य शामिल होते हैं। अध्यक्ष की नियुक्ति उन व्यक्तियों में से की जाती है जिन्हें लोक कार्यों का अनुभव हो। बाकी के सदस्यों का चयन न्यायतंत्र, लेखा, प्रशासन और अर्थशास्त्र से की जाती है।

संविधान के तहत, केंद्र और राज्यों के बीच बांटे जाने वाले करों के हिस्से का आधार और राज्यों के लिए सहायता अनुदान के सिद्धांत आयोग द्वारा प्रत्येक पांच वर्ष में तय किए जाते हैं। राष्ट्रपति अन्य किसी मामले को बेहतर वित्त के हित में आयोग को सौंप सकते है।

आयोग राष्ट्रपति को निम्न सिफारिशें प्रस्तुत करता हैः

- केंद्र और राज्यों के मध्य करों की शुद्ध आय के बंटवारे का आधार।
- सिद्धांत, जो भारत की संचित निधि से राज्यों के लिए बढ़ाई गई 'सहायता अनुदान' (Grants-in-aid) को नियंत्रित करता है।
- यह असम, बिहार, ओड़ीसा और पश्चिम बंगाल आदि राज्यों को जूट उत्पाद पर निर्यात शुल्क की व्यवस्था के कार्य के स्थान पर भुगतान की जाने वाली राशियाँ हैं।

वित्त आयोग की सिफारिशों के साथ एक विवरणात्मक ज्ञापन जिन पर सरकार द्वारा कार्य किया जाना है संसद के प्रत्येक सदन के सामने रखा जाता है।

केंद्र और राज्यों के बीच वित्तीय संतुलन को बनाए रखने के लिए वित्त आयोग का गठन करने की आवश्यकता है। वित्त आयोग क्षेत्रीय असंतुलन को ठीक करने के लिए एक यंत्र की तरह है। यह केंद्र और राज्यों के बीच सामंजस्य बनाने वाली ऐजेंसी की तरह महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। संविधान में यह कहीं भी बताया नहीं गया है कि सरकार आयोग की सिफारिशों को मानने के लिए बाध्य है, केंद्र सरकार सिफारिशों को स्वीकार करने के लिए स्वयं उपयुक्त है।

73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम में राज्य वित्त आयोग का गठन जो कि राज्य सरकार और स्थानीय निकायों के बीच राजस्व के बंटवारे की सिफारिश के लिए किया गया है। राज्य वित्त आयोग का गठन प्रत्येक पांच वर्ष किया जाता है। इसकी रिपोर्ट पर केंद्रीय स्तर के वित्त आयोग द्वारा विचार किया जाना आवश्यक है।

2.3.3 चुनाव आयोग

संविधान में एक स्वतंत्र चुनाव आयोग का प्रावधान संसद, राज्य विधानसभा और राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति के कार्यालय के निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित कराने के लिए किया गया है। यह आयोग अपने आप में बहुत विशिष्ट है अपनी शुरूआत से (16 अक्टूबर, 1989 से 1 जनवरी, 1990 के अलावा) इसने केवल एक सदस्य संस्था के रूप में कार्य किया है जिसमें मुख्य चुनाव आयुक्त सम्मिलित रहे है और 1993 के पश्चात यह आयोग तीन सदस्य संस्था बन गया। इस संवैधानिक संस्था की स्थापना अनुच्छेद 324 के अनुसरण में हुई। राष्ट्रपति चुनाव आयोग की नियुक्ति मुख्य चुनाव आयुक्त और अन्य आयुक्तों के साथ करता है। पहले कार्यकाल पांच वर्ष था, जिसे बढ़ाकर अब छः वर्ष या उनकी 65 वर्ष की आयु होने तक कर दिया गया है; जो भी पहले हो। राष्ट्रपति के द्वारा संसद की सिफारिश पर दुराचार और असक्षम सिद्ध होने पर मुख्य चुनाव आयुक्त का कार्यकाल कम किया जा सकता है। किसी अन्य चुनाव आयुक्त को उसके कार्यकाल से हटाया नहीं जा सकता जब तक कि मुख्य चुनाव आयुक्त इसकी सिफारिश न करे।

चुनाव आयोग (Election Commission) के कार्य हैं:

- केंद्र और राज्य विधानसभा के लिए प्रत्येक आम चुनाव से पूर्व मतदाता सूची तैयार करना और प्रत्येक जनगणना के पश्चात उसे संशोधित करना।
- पूरे देश में चुनाव तंत्र का निरीक्षण करना ताकि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव हो सकें।
- समय-समय पर नामांकित कर्मचारियों की चुनाव संपन्न कराने के लिए नियुक्ति करना और आवश्यक चुनावी सामग्री का प्रबंधन करना।
- चुनाव से पूर्व चुनाव की तिथि और सारणी सूचित करना ताकि नामांकन दस्तावेज़ भरे जा सके और उनकी छंटनी की जा सके।
- चुनावी प्रबंधन से संबंधित विवादों की जांच के लिए अधिकारियों की नियुक्ति करना।
- बड़े पैमाने पर धांधली और अनियमितता होने पर चुनाव निरस्त करना।
- किसी राजनैतिक दल को मान्यता देने या चुनाव के लिए चिन्ह आवंटित करने संबंधी मामलों के लिए न्यायाधिकरण की भूमिका निभाना।
- राष्ट्रपति या राज्यपाल को किसी विधायक की अयोग्यता से संबंधित मामले में सलाह देना।
- चुनाव के परिणामों की घोशणा करना और चुनावी विवादों का फैसला करने के लिए चुनाव न्यायाधिकरणों की नियुक्ति करना।
- चुनाव के दौरान सभी दलों और जनता द्वारा पालन किए जाने के लिए आचार संहिता जारी करना।

73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम के द्वारा राज्य स्तर पर चुनाव आयोग का गठन किया गया ताकि वह राज्यों में ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों के लिए चुनाव संपन्न करा सके।

2.3.4 संघ लोक सेवा आयोग

संविधान का अनुच्छेद 315, केंद्र के लिए एक लोक सेवा आयोग और प्रत्येक राज्य के लिए लोक सेवा आयोग की स्थापना का प्रावधान करता है। दो या दो से अधिक राज्यों की सहमति पर उन राज्यों के समूह के लिए वहां एक ही लोक सेवा आयोग का गठन किया जा सकता है यदि विधानसभा द्वारा प्रभावी रूप से प्रस्ताव पारित किया जाए। तत्पश्चात, संसद कानून द्वारा उन राज्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग उपलब्ध करा सकता है। अनुच्छेद 316 भारत के राष्ट्रपति को आयोग के अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति का अधिकार देता है। हालांकि, संविधान में आयोग की सदस्यता के आकार के बारे में कोई वर्णन नहीं किया गया है। सामान्यतः, संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) में 6 से 8 सदस्य होते हैं।

यूपीएससी या संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों की संख्या और उनके कार्य की शर्तों का निर्धारण भारत के राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है और राज्य के स्तर पर राज्य लोक सेवा आयोग का संबंधित राज्य के राज्यपाल के द्वारा किया जाता है। संविधान यह भी निर्धारित करता है कि आयोग के आधे सदस्य वे व्यक्ति होने चाहिए जिन्होंने भारत सरकार या एक राज्य के कार्यालय के अधीन कम से कम दस वर्ष कार्य किया हो।

यूपीएससी का अध्यक्ष और सदस्यों का कार्यकाल छः वर्ष या उनकी 65 वर्ष की आयु होने तक है, इसमे से जो भी पहले हो। संविधान ने यूपीएससी के सदस्यों के कार्य की शर्तों का निर्धारण करने की स्वतंत्रता राष्ट्रपति पर छोड़ दी हैं जैसे कि वेतन, यात्रा भत्ता और अवकाश नियम आदि। नियुक्ति के पश्चात उनकी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कार्य की शर्तों में परिवर्तन नहीं किया जाएगा। केंद्र और राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्यों के वेतन, भत्ते और देय पेंशन का भुगतान भारत की संचित निधि से किया जाएगा।

आयोग के सदस्यों की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के लिए विस्तृत कानूनी प्रावधान बनाए गए हैं। किसी भी सदस्य को हटाया जा सकता है यदि वह अपने पद से त्यागपत्र देता है या फिर राष्ट्रपति उसे पद से हटाते है। राष्ट्रपति किसी भी सदस्य को दिवालिया घोषित होने, अपने पद के अतिरिक्त किसी अन्य भुगतान वाले रोज़गार में लिप्त हो या राष्ट्रपति के विचार से मानसिक या शारीरिक रूप से दुर्बल होने पर उसे उसके पद से हटा सकता है। यदि सर्वोच्च न्यायालय उसे राष्ट्रपति द्वारा संदर्भित किसी दुराचार में दोशी पाता है, इसके अतिरिक्त उसे अन्य किसी आधार पर पद से हटाया नहीं जा सकता।

यूपीएससी का कर्तव्य है कि वह आयोग द्वारा किए गए कार्य की वार्षिक रिपोर्ट राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करे। इस रिपोर्ट के मिलने पर राष्ट्रपति इसकी प्रतिलिपि के साथ मामलों के स्पष्टीकरण का ज्ञापन रखता है, यदि कोई हो तो, जहां पर आयोग की सलाह संसद के पटल पर स्वीकार नहीं की गई हो।ऐसे मामलों में कारण अस्वीकार्य घोषित किया जाना चाहिए।

2.3.5 भारत के महान्यायवादी

महान्यायवादी (Attorney General) को औपचारिक रूप से महाधिवक्ता के तौर पर जाना जाता है, यह भारत सरकार के उच्चतम विधि अधिकारी होते हैं। इनकी नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति करते हैं और वही उनकी नियुक्ति को समाप्त भी कर सकते हैं। महान्यायवादी की सेवा की परिलब्धियां और शर्तें राष्ट्रपति के द्वारा निर्धारित की जाती हैं। संविधान कहता है कि महान्यायवादी की शैक्षणिक योग्यताओं का सर्वोच्च न्यायालय के न्यायधीश के समान होना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, उसे भारत का नागरिक होना चाहिए। उसने कम से कम

पांच वर्ष उच्च न्यायालय में न्यायधीश के तौर पर कार्य किया हो या किसी उच्च न्यायालय में कम से कम दस वर्ष के लिए वकील के तौर पर कार्य किया हो या उसे प्रतिष्ठित न्यायविद् होना चाहिए। वह राष्ट्रपति के समक्ष अपने त्यागपत्र से पद का त्याग कर सकते हैं। उन्हें संसद के सदस्यों को प्राप्त सभी सुविधाओं और प्रतिरक्षाओं के उपभोग की अनुमति होती है।

महान्यायवादी को संसद की कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार होता है, परन्तु उसे मतदान का अधिकार नहीं होता है। अपने दायित्वों की समाप्ति के पश्चात उसे भारत के न्यायालयों में सुनवाई में भाग लेने का अधिकार होता है। महान्यायवादी की सहायता के लिए एक सॉलिसिटर जनरल और दो अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल होते हैं।

महान्यायवादी का मुख्य कार्य केंद्र सरकार को उन कानूनी मामलों में सलाह देना होता है जो उसे सौंपे गए हों और उन कानूनी विषय के दायित्वों को पूरा करना जो उसके लिए निर्धारित किए गए हों। वह समय-समय पर राष्ट्रपति द्वारा सौंपे गए अन्य कानूनी विषय से संबंधित दायित्वों को भी पूरा करता है। वह निम्नलिखित कार्य करता हैः

- सरकार की ओर से मुकद्दमों और पुनर्विचार सहित सभी मामलों में सर्वोच्च न्यायालय या किसी भी उच्च न्यायालय में उपस्थित होना जिसमें सरकार एक पक्ष हो। उसे संसद या उसके पीठासीन अधिकारी के ओर से न्यायालय में बुलाए जा सकता है।
- सर्वोच्च न्यायालय की सलाहकार राय के लिए राष्ट्रपति द्वारा दर्शाए गए मामलों में भारत सरकार के विचार को प्रस्तुत करने के लिए उपस्थित रहना।
- वह आधिकारिक रूप से भारत के सभी न्यायालयों और जांच आयोग की सुनवाई में शामिल हो सकता है।
- सर्वोच्च न्यायालय में उपस्थित होने पर वह बाकी के सभी अधिवक्ताओं का प्रधान होता है।
- पूछे जाने पर कानूनी और संवैंधानिक महत्व के मामलों में सलाह देना, यद्यपि सभापति उस सलाह को मानने के लिए बाध्य नहीं होता है।
- सुनिश्चित मौलिक अधिकारों को हानि पंहुचाए बिना और संघ व्यवस्था के अधीन राज्य के विधायी क्षेत्र सीमांकन का अतिक्रमण किए बिना संसद को सक्षमता के अनुसार कानून पारित करने के लिए सलाह देना।

ऊपर वर्णित कार्य और शक्तियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि महान्यायवादी भारत सरकार के लिए कानूनी और संवैधानिक महत्व के मामलों के मुख्य सलाहकार होते हैं।

2.3.6 राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग

संविधान के अनुच्छेद 338 के तहत अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग का प्रावधान था जिसे 1990 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग (National Commission for Scheduled Castes) में बदल दिया गया। बाद में, 89वें संविधान संशोधन अधिनियम 2003, में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग का विभाजन हो गया। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (अनुच्छेद 338) एक बहु-सदस्य संस्था है, जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति के आदेश और मुहर लगे आदेश द्वारा होती है। यह अनुसूचित जाति को संविधान के अधीन उपलब्ध कराए गए सुरक्षा उपायों से संबंधित मामलों की जांच और निगरानी करता है या उनके सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए कोई अन्य कानून और सिफारिशें करता है। राष्ट्रीय आयोग संसद को अपनी वार्षिक रिपोर्ट सौंपता है।

2.3.7 राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग

राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (National Commission for Scheduled Tribes) (अनुच्छेद 338 क) एक बहु-सदस्य संस्था है, जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति के आदेश और मुहर लगे आदेश द्वारा होती है। यह अनुसूचित जनजाति को संविधान के अधीन उपलब्ध कराए गए सुरक्षा उपायों से संबंधित मामलों की जांच और निगरानी करता है या उनके सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए कोई अन्य कानून और सिफारिशें करता है। राष्ट्रीय आयोग संसद को अपनी वार्षिक रिपोर्ट सौंपता है।

अनुसूचित जातियां और जनजातियों को संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त है। अनुच्छेद 46 राज्य को शक्तियां देता है कि वह जनता के कमज़ोर वर्ग और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों को बढ़ावा देने के लिए उनकी शिक्षा और आर्थिक हितों का विशेष ध्यान रखे। यह वचन देता है कि उन्हें सामाजिक अन्याय और हर प्रकार के शोषण से उनकी सुरक्षा करेगा। अनुच्छेद 275 (1) अनुसूचित जनजातियों को प्रोन्नति और कल्याण के लिए अनुदान सहायता का वचन देता है।

2.3.8 राजभाषा आयोग

संविधान राजभाषा आयोग के गठन का प्रावधान करता है। संविधान के आरंभ होने के पांच वर्ष पश्चात और तत्पश्चात इस प्रकार के आरंभ के दस वर्ष समाप्त होने पर, राष्ट्रपति को ऐसे आयोग का गठन करने की शक्ति प्राप्त है। आयोग में एक अध्यक्ष और ऐसे सदस्य सम्मिलित होते हैं जो कि आठवीं अनुसूचि में निर्दिष्ट अलग-अलग भाषाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं।

राजभाषा आयोग (Official Language Commission) निम्नलिखित कार्य करता है। आयोग राष्ट्रपति को सिफारिशें देने के लिए होता हैः

- संघ के राजकीय प्रयोजनों से हिन्दी भाषा का अधिकाधिक प्रयोग।
- संघ में सभी या किसी भी प्रयोजन के लिए अंग्रेज़ी भाषा के प्रयोग पर पाबंदी लगाना।
- संघ के किसी भी या अधिक निर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंको के रूप।
- संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राजय के बीच पत्रादि की भाषा और उनके प्रयोग से संबंध में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्देशित किए गए किसी अन्य विषय के बारे में सिफारिश करे।

आयोग द्वारा की गई सिफारिशों की जांच एक अन्य संवैधानिक प्राधिकरण करता है, जिसे राजभाषा आयोग की रिपोर्ट की जांच के लिए संसदीय समिति कहा जाता है। रिपोर्ट पर विचार करने के बाद राष्ट्रपति पूरी रिपोर्ट या उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश देते है।

2.3.9 भाषाई अल्पसंख्यक आयोग

संविधान का अनुच्छेद 350 ख 1956 में जोड़ा गया, जो प्रदान करता हैः ''यहां पर भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एक विशेष अधिकारी होना चाहिए''। विशेष अधिकारी संविधान के तहत भाषाई अल्पसंख्यकों प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों से संबंधित मामलों की जांच करता है और उन मामलों में राष्ट्रपति के निर्देश अनुसार समय पर राष्ट्रपति को रिपोर्ट करता है।

2.3.10 प्रशासनिक अधिकरण

लोक कार्मिक सेवा की भर्ती और शर्तों से संबंधित विवादों और शिकायतों का निर्णय करने के लिए प्रशासनिक न्यायधिकरण (Administrative Tribunals) की स्थापना के लिए 1976 में संविधान में संशोधन किया गया। 1985 में पहली बार केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण का गठन हुआ। इसका कार्य केंद्रीय सेवाओं और अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों की सेवा की भर्ती और शर्तों से संबंधित विवादों को सुलझाना है। केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण एक बहु-सदस्य संस्था है जिनका आधार न्यायिक और प्रशासनिक दोनों से हो।

2.3.11 लोक सेवा

भारत का संविधान लोक सेवाओं की अखिल भारतीय कॉडर की व्यवस्था करता है। यहां पर तीन प्रकार की अखिल भारतीय सेवाएं होती हैं, भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और भारतीय वन सेवा। अधिकारियों की भर्ती संपूर्ण भारत में समान शैक्षणिक योग्यता और एक समान वेतन पैमाने पर होती है। संविधान संसद को यह अधिकार देता है कि वह सेवाओं में नियुक्त हुए व्यक्तियों की सेवा की भर्ती और शर्तों को कानून के द्वारा निर्धारित कर सकता है। अन्य संघीय सरकारों की तरह, केंद्र और घटक राज्यों के पास संविधान के अधीन अपने प्रशासन संबंधी मामलों के लिए अलग-अलग लोक सेवाएं हैं। यहां पर केंद्र के विषय जैसे कि रक्षा, आयकर, रेल आदि के प्रशासन के लिए केंद्रीय सेवाएं हैं। इन सेवाओं के अधिकारी विशेषकर केंद्रीय सरकार के होते हैं। समान रूप से राज्यों की अपनी अलग और स्वतंत्र सेवाएं होती हैं।

आधुनिक समय में लोक सेवाओं की भूमिका में परिवर्तन हो रहा है। डेनहार्ड और डेनहार्ड (2000) ने सही ही कहा है, "नौकरशाहों को जन स्रोतों का प्रबंधक, लोक संगठनों का संरक्षक, नागरिकता का सूत्रधार और लोकतंत्र की आवाज़, सामुदायिक भागीदारी का उत्प्रेरक और समान समय पर सड़क स्तर का नेता होना चाहिए"। वर्तमान सरकारी प्रचलन में प्रबंधन तंत्र और परस्पर संवाद नीति बनाना है जहां बहु सामाजिक कार्य करने वाले जैसे निजी, गैर-सरकारी और स्वैच्छिक संगठन, व्यक्तियों, समुदाय, स्वयं-सहायक समूह आदि नीतियों के निर्माण में सम्मिलित हैं। ऐसे परिदृश्य में, नौकरशाहों को इन सहयोगियों को पटल पर लाना चाहिए, निर्णयों में सूत्रधार और बातचीत कर हितों और दायित्वों में साझेदारी की भावना का निर्माण करना चाहिए (मेथ्यु, 2003)। इस प्रकार, इन परिस्थितियों में जटिल परिस्थितियों से निपटने के लिए लोक सेवक बहुमुखी भूमिका निभाते हैं—नेतृत्व, समायोजन और परिचालन।

बोध प्रश्न—1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिय गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइये।

1. भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के क्या कार्य हैं?

....

....

....

....

2. वित्त आयोग के कार्यों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

2.4 अन्य महत्वपूर्ण आयोग

संवैधानिक प्राधिकरणों और आयोगों के अतिरिक्त यहां पर अन्य महत्वपूर्ण आयोग भी हैं जिनका हमने पहले वर्णन किया था, जो कि संवैधानिक नहीं हैं।ये संसद के अधिनियम द्वारा बनाए गए हैं। हम इनमें से तीन के बारे में नीचे चर्चा करेंगेः

2.4.1 राष्ट्रीय महिला आयोग

राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990, राष्ट्रीय महिला आयोग (National Commission for Women-एनसीडब्ल्यू) की 31 जनवरी 1992, को इसकी स्थापना करता है। एनसीडब्ल्यू भारत सरकार की वैधानिक संस्था है। यह समान्यतः महिलाओं को प्रभावित करने वाली सभी नीतियों के मामलों में सरकार को सलाह देती है। एनसीडब्ल्यू का उद्देश्य महिलाओं के अधिकारों को भारत के समक्ष प्रतिनिधित्व करना है और उनकी समस्याओं और चिंताओं को आवाज़ देना है। इस संस्था के घोशणापत्र में निम्नलिखित सम्मिलित हैः

- महिलाओं के संवैधानिक और कानूनी सुरक्षा उपायों की समीक्षा करना।
- उपचारात्मक विधायी उपायों की सिफारिश करना।
- शिकायत निवारण की सुविधा देना।
- महिलाओं को प्रभावित करने वाली सभी नीतियों के मामले में सरकार को सलाह देना।

यह सभी महिलाओं का आयोग है जिसमें सदस्य-सचिव और एक अध्यक्ष सहित छः सदस्य हैं। यह संविधान और अन्य कानून के तहत महिलाओं के कानूनी सुरक्षा उपायों की जांच का दायित्व लेता है और उनको प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें बनाता है। यह जेलों, सुधारालयों आदि का निरीक्षण करता है, जहां पर महिलाओं को हिरासत में रखा जाता है और उपचारात्मक कार्यवाही का सुझाव देता है। इसके अतिरिक्त, यह महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में सलाह देता है और उसकी प्रगति का मूल्यांकन करता है।

आयोग मौखिक या लिखित शिकायतों पर कानूनी कार्यवाही करता है। यह अपने लिए नोटिस (सुओ मोटो नोटिस) संबंधित महिलाओं के मामलों में विचार करता है।

2.4.2 राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग

भारतीय संसद ने 1993 में राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग अधिनियम पारित किया था, जिसका उद्देश्य सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुसार केंद्र में एक स्थाई संस्था का गठन करना

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

था जो कि अन्य पिछड़ा वर्गों (ओबीसी) की सूची में समावेश के याचिकाओं और अति-समावेशन और अल्प-समावेशन की शिकायतों की जांच और सिफारिश करे। राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (National Commission for Backward Classes) अगस्त 1993 से अस्तित्व में है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 338ख के प्रावधानों के अधीन इसे 123वें संविधान संशोधन के द्वारा संवैधानिक स्तर प्राप्त हुआ। आयोग में एक अध्यक्ष पांच सदस्य तीन वर्ष की अवधि के लिए होते हैं।

आयोग के कर्तव्यों में, नौकरी आरक्षण के उद्देश्य से, पिछड़े के रूप में अधिसूचित समुदायों की सूची में से जिन्हें बाहर रखा गया उनके समावेशन पर विचार करना निहित है। आयोग केंद्रीय सरकार को पिछड़े वर्गों से संबधित मामलों में आवश्यक सलाह देता है और आयोग को सिविल न्यायालय की शक्तियां प्राप्त है।

2.4.3 राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग और राज्य मानव अधिकार आयोग

मानव अधिकार मानव के अस्तित्व के का आधार होते हैं, जो उसे इच्छानुसार स्वाभिमान से स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने की स्वीकृति देते हैं। इनमें नागरिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार सम्मिलित हैं। भारतीय संविधान अनुच्छेद 32 के तहत मानव अधिकारों को सुनिश्चित करता है, कोई भी व्यक्ति विशेष अपने मानव अधिकारों को लागू करवाने के लिए सर्वोच्च न्यायालय जा सकता है। 1993 में, वियना (Vienna) में मानव अधिकार विश्व सम्मेलन में पुनः पुष्टि करता है कि सभी राज्य बिना अपने राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्था के हित के सभी मानव अधिकरों और मौलिक स्वतंत्रता को बढ़ावा और सुरक्षा दें। इसके समन्वय में भारत सरकार ने 1993 में, मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम पारित किया।

केंद्र सरकार ने मानव अधिकार अधिनियम 1993 के संरक्षण के लिए 12 अक्टूबर, 1993 को स्थाई लोक संस्था के तौर पर राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग (National Human Rights Commission-एनएचआरसी) का गठन किया। एनएचआरसी में आठ सदस्य होते हैं, एक अध्यक्ष (भारत के पूर्व मुख्य न्यायधीश), सर्वोच्च न्यायालय के वर्तमान या पूर्व न्यायधीश, एक उच्च न्यायालय के वर्तमान या पूर्व मुख्य न्यायाधीश, दो जिन्हें मानव अधिकार के क्षेत्र में ज्ञान हो और राष्ट्रीय महिला आयोग, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग और राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष। यहां एक महासचिव होता है जो आयोग का मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता, उसके पास सभी अधिकार होंगे और समय-समय पर उसे सौंपे गए कार्यों का निष्पादन करेगा।

अधिनियम के अनुसार, एनएचआरसी के द्वारा निम्नलिखित कार्यों को पूरा किया जाएगाः

- मानव अधिकारों के उल्लंघन या हनन की शिकायत पर किसी भी पीड़ित या व्यक्ति द्वारा दाखिल याचिका या अपने लिए नोटिस (सुओ मोटो) की जांच करना;
- लोक सेवक के द्वारा ऐसे उल्लंघन की रोकथाम में लापरवाही।
- किसी भी न्यायालय में मानव अधिकारों के उल्लंघन के आरोप में लम्बित पूर्ववर्ती मामला जो कि उस न्यायालय में अनुमोदन प्राप्त हो, में हस्तक्षेप करना।
- राज्य सरकार की सूचना पर राज्य सरकार की जेल या अन्य संस्थान का दौरा करना, जहां पर लोगों को हिरासत में या उपचार के उद्देश्य से, सुधार या सूचित

करने वालों की जीवित परिस्थितियों पर अध्ययन करना और उस पर सिफारिश करना;

- भारत के संविधान के अधीन प्राप्त सुरक्षा उपायों या कोई भी कानून जो मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए समय का उपयोग करते हुए बनाया गया की समीक्षा करना और उनको प्रभावी कार्यान्वयन के लिए उपायों की सिफारिश करना;
- आतंकवाद सहित अन्य घटकों की समीक्षा करना जो मानव अधिकारों के उपयोग में रोक लगाते हैं और उचित उपचारात्मक उपायों की सिफारिश करना;
- मानव अधिकारों पर संधियों और अन्य अंतर्राष्ट्रीय उपकरणों का अध्ययन करना और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें देना;
- समाज के विभिन्न वर्गों में मानव अधिकारों के ज्ञान को फैलाना और इन अधिकारों की सुरक्षा के लिए उपलब्ध सुरक्षा उपायों की जागरूकता को मीडिया, सम्मेलनों और अन्य उपलब्ध माध्यमों के द्वारा बढ़ावा देना;
- मानव अधिकारों के क्षेत्र में गैर–सरकारी संगठनों और संस्थानों को काम करने के लिए प्रेरित करना; और
- ऐसे अन्य कार्यों पर विचार करना जो भारत में मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए आवश्यक हैं।

राज्य सरकार को राज्य मानव अधिकार आयोग (एसएचआरसी) के नाम से पहचानी जाने वाली एक संस्था का गठन करना होता है जिसका कार्य ऊपर दी गई शक्तियों का प्रयोग करना है और राज्य सरकार को निर्धारित कार्यों को करना है। वर्तमान में 25 राज्य, राज्य मानव अधिकार आयोग का गठन कर चुके हैं।

सभी संवैधानिक आयोगों और प्राधिकरणों में कुछ समान विशेषताएं होती हैं जिनका नीचे वर्णन किया जा रहा हैः

- भारत के राष्ट्रपति सदस्यों की नियुक्ति करते हैं।
- इनमें से कई पदाधिकारी और संस्थाओं का गठन इस कर्तव्य के तहत हुआ है कि वे सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंपे। रिपोर्ट संसद के दोनों सदनों के या फिर मामले के आधार पर राज्य विधानसभा के समक्ष रखी जानी चाहिए। हालांकि, इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि भारत के महान्यायवादी, चुनाव आयुक्त और राज्य के महाधिवक्ता जैसे पदाधिकारी अपने कार्यों की रिपोर्ट नहीं सौंपते।
- संविधान में सदस्यों को हटाने की प्रक्रिया निर्धारित है।
- इस प्रक्रिया को जानकार जटिल बनाया गया है ताकि इसको आसानी से प्रयोग न किया जा सके।

बोध प्रश्न–2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिय गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइये।

1. राष्ट्रीय महिला आयोग के क्या कार्य हैं?

....

....

....

....

2. संवैधानिक आयोगों और प्राधिकरणों की समान विशेषताओं की सूची बनाइए।

....

....

....

....

2.5 निष्कर्ष

स्वतंत्रता के बाद भारत के शासन के संविधानवाद सबसे महत्वपूर्ण स्वतंत्रता पश्चात घटनाओं में से एक है। भारत के उदार लोकतांत्रिक संविधान की भूमि के बुनियादी कानून ने देश के नागरिकों के सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक न्याय, स्वतंत्रता, समानता, व्यक्तिविशेष के स्वाभिमान और राष्ट्र की एकता और अखंडता को सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रावधानों का निर्माण किया है। इन संवैधानिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए संविधान ने स्वयं कुछ महत्वपूर्ण प्राधिकरणों और आयोगों का निर्माण किया है। संवैधानिक प्रावधान, प्राधिकरण और आयोग सार्वजनिक प्रणाली में संभावना और कार्यों का निर्धारण करते हैं, और भारत में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन संवैधानिक ढांचे और संविधान में प्रतिष्ठापित मूलभूत सिद्धांतों पर कार्य करते है।

2.6 शब्दावली

भारत की संचित निधि (Consolidated Fund of India) : यह वह निधि है जिसमें सरकार द्वारा प्राप्त सारा राजस्व, दिए गए ऋणों और उनकी प्राप्तियां सम्मिलित होती हैं। सारा सरकारी व्यय इस संचित निधि से किया जाता है और संसद के प्राधिकार के बिना कोई भी राशि निकाली नहीं जा सकती।

आपात निधि (Contingency Fund) : इसका प्रयोग संसद के प्राधिकार द्वारा आकस्मिक अनपेक्षित व्यय के को पूरा करने के लिए किया जाता है। जब संसद का सत्र नहीं चल रहा होता है और इस निधि से कोई भी व्यय किया जाता है तो उसे बाद में प्राप्त कर लिया जात है, और निधि से खर्च की गई राशि की प्रतिपूर्ति हो जाती है।

न्यायिक समीक्षा (Judicial Review) : यह न्यायिक तंत्र की शक्तियों की ओर संकेत करता है उदाहरण के लिए अधिकारियों के प्रशासनिक कार्यों की वैधता और संवैधानिकता, कार्यकारी आदेशों और वैधानिक अधिनियमन का न्यायालय द्वारा जांच करना। यह न्यायिक नियंत्रण का प्रयोग करने की एक विधि है। न्यायिक समीक्षा संवैधानिक प्रावधानों और इससे संबधित अधिनियमों के अधिन है, जो विशेष मामलों में प्रशासनिक निर्णयों से निपटते हैं।

सार्वजनिक लेख (Public Account) : इसमें सरकार के अन्य लेन-देन का धन शामिल होता है जैसे कि भविष्य निधि, छोटी बचत संचय, अन्य जमा आदि।

वेस्टमिन्सटर प्रारूप (Westminster Model) : यह प्रारूप आमतौर पर ब्रिटिश सरकार की शैली के रूप में पहचाना जाता है। इसकी मुख्य विशेषताओं में संसदीय संप्रभुता, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के द्वारा जवाबदेही, मजबूत मंत्रीमंडल सरकार, साझा दायित्व, केंद्र प्रधान सरकार, मंत्री का दायित्व और निष्पक्ष नागरिक सेवा सम्मिलित है।

2.7 संदर्भ लेख

Austin, G. (2001). *The Indian Constitution Cornerstone of a Nation*. New Delhi, India: Oxford University Press.

Arora, R.K. & Goyal, R. (1995). *Indian Public Administrative Institutions*. New Delhi, India: Vishwa Prakashan.

Chakrabarty, B. (2003). Parliamentary Federalism in India: The Constitutional Inputs and the Process of Imagining. *Indian Social Science Review.* 5(1).

Dhameja, Alka. (Ed.). (2003). *Contemporary Debates in Public Administration*. New Delhi, India: Prentice-Hall of India Private Ltd.

Maheswari. S.R. (2000). *Public Administration in India – An Introduction*. New Delhi, India: Macmillan India Limited.

Rajaram, K. (Ed). (2001). *Indian Polity*. New Delhi, India: Spectrum Books Pvt. Ltd.

Basu, D.D. (2015). *Introduction to the constitution of India* (22nd Ed.). Nagpur, India: LexisNexis.

Denhardt, B. & Denhardt, J. (2000). The New Public Service: Serving rather than Steering. *Public Administration Review.* 60(6): 549-559.

Mathew, D. (2003). Bureaucracy: Changing Roles and Relationships, A Transformative Agenda. In E.Vayunandan & Dolly Mathew (Eds.). *Good Governance: Initiatives in India*. New Delhi, India: Prentice Hall of India.

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के कार्यः

   - केंद्र और राज्यों की आपात निधि और सार्वजनिक लेखों से संबंधित लेन–देन का लेखा परीक्षण।
   - केंद्र या राज्य के किसी भी विभाग में रखे गए सभी व्यापार, विनिर्माण, लाभ और हानि लेखा, तुलन पत्र और अन्य सहायक लेखों; और प्रत्येक मामले में व्यय, लेन-देन या लेखापरीक्षा किए गए लेखों से संबंधित प्रत्येक मामलों की रिपोर्ट करना।
   - केंद्र और राज्य के राजस्व से मूलतः वित्तपोशित निकायों या प्राधिकरणों की पावतियां और व्यय का लेखा परीक्षण।
   - याचिका द्वारा अन्य किसी भी निकाय या प्राधिकरण के लेखों का परीक्षण।

2. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   राष्ट्रपति को सिफारिश सहित वित्त आयोग के कार्यः

   - केंद्र और राज्यों के मध्य करों की कुल प्राप्ति के बंटवारे का आधार।
   - सिद्धांत, जो भारत की संचित निधि से राज्यों के लिए बढ़ाई गई 'सहायता अनुदान' को नियंत्रित करता है।
   - यह असम, बिहार, ओड़ीसा और पश्चिम बंगाल आदि राज्यों को जूट उत्पाद पर निर्यात शुल्क की व्यवस्था के कार्य के स्थान पर भुगतान की जाने वाली राशियाँ हैं।

बोध प्रश्न-2

1. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   राष्ट्रीय महिला आयोग के कार्यों में सम्मिलित हैः

   - महिलाओं के संवैधानिक और कानूनी सुरक्षा उपायों की समीक्षा करना।
   - उपचारात्मक विधायी उपायों की सिफारिश करना।
   - शिकायत निवारण की सुविधा देना।
   - महिलाओं को प्रभावित करने वाली सभी नीतियों के मामले में सरकार को सलाह देना।

2. आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिएः

   - संवैधानिक प्राधिकरणों और आयोगों के सदस्यों की नियुक्ति भारत का राष्ट्रपति करता है।
   - इनमें से कई प्राधिकरणों, पदाधिकारियों और आयोगों की रिपोर्ट, कुछ को छोड़कर, यथास्थति अनुसार संसद या राज्य विधानसभा के समक्ष प्रस्तुत होनी चाहिए।
   - संविधान में सदस्यों को हटाने की प्रक्रिया निर्धारित है।

इकाई 3 सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधनः राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक संदर्भ*

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 राजनीतिक संदर्भ

3.3 सामाजिक संदर्भ

3.4 आर्थिक संदर्भ

3.5 राज्य और अर्थव्यवस्था का परिवर्तनशील स्वरूप

3.6 निष्कर्ष

3.7 शब्दावली

3.8 संदर्भ लेख

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्न को समझ सकेंगे :

- भारत में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिवेश का गतिशील स्वरूप; और
- राज्य और अर्थव्यवस्था के परिवर्तनशील संदर्भ में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन।

3.1 प्रस्तावना

किसी भी देश का सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन तंत्र उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियों में निहित होता है। इस संदर्भ में, शासन के महत्त्वपूर्ण आयामों की सहायता से संविधान के दायरे में राज्य की कार्य प्रणाली के गतिशील स्वरूप और भूमिका को समझना आवष्यक है।

विकास क्षेत्र से जुड़े व्यवसायी देशों के विकास निष्कर्षों को आकार प्रदान करने में सामाजिक और राजनीतिक संरचनाएँ जो भूमिकाएँ अदा करती हैं, इसके प्रति काफी सजग हैं। राजनीतिक और संस्थागत चुनौतियों का पहले से ही अनुमान न लगा पाना असफल नीति-सुधार प्रक्रियाओं का प्रमुख कारण है। अतः, देश के राजनीतिक, सामाजिक-आर्थिक संदर्भ की ठोस विश्लेषण की आवश्यकता है। इस इकाई में, भारत के विशेष संदर्भ में प्रचलित राजनीतिक, सामाजिक-आर्थिक वातावरण में सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन पर विचार-विमर्श करने का प्रयास किया गया है।

*योगदानः डॉ. सी. एच. सी. प्रसाद, सहायक निदेशक, डॉ. बी. आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

3.2 राजनीतिक संदर्भ

सभी सार्वजनिक प्रणालियाँ – नौकरशाही, पैरास्टेटल (Parastatal) निकाय, स्थानीय सरकारी संस्थाएँ व सार्वजनिक हित में कार्यरत अन्य निकायों का प्रबंधन राजनीतिक तंत्र के व्यापक दायरे में किया जाता है। इसलिए राजनीतिक वातावरण में परिवर्तन से किसी देश की सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का प्रभावित होना स्वाभाविक है।

स्वतंत्रता के बाद, भारत ने लोकतंत्र के संसदीय रूप को शासन के संस्थागत मॉडल के रूप में अपनाया। शासन की इस प्रणाली में कार्यपालिका विधायिका के प्रति जवाबदेह होती है। भारतीय राजनीतिक प्रणाली की अन्य प्रमुख विशेषता है – संघीय प्रणाली। हालांकि, संविधान में ''संघ'' शब्द का कहीं उल्लेख नहीं किया गया है, फिर भी संघीय सरकार की सभी संरचनात्मक विशेषताएँ भारत में विद्यमान व क्रियाशील है।

भारतीय शासन प्रणाली दो प्रतिष्ठित मॉडलों का मिला-जुला रूप है – ब्रिटिश परंपरा वाली संसदीय संप्रभुता और परिपाटियाँ (Conventions) तथा लिखित संविधान की प्रधानता वाले अमेरिकी सिद्धांत और न्यायिक समीक्षा। इस प्रकार, भारत एक संसदीय संघीयकरण है – जो संसदीय कार्य प्रणाली और संघीय सिद्धांतों, दोनों पर आधारित हैं।

उदार लोकतंत्र संघ राज्य भारत ने सार्वजनिक प्रणालियों के सक्षम प्रबंधन के माध्यम से देश का विकास करने की कोशिश की है। पिछले आठ दशकों के मुख्य राजनीतिक विकासों का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है : (क) केंद्रीय शासनवाद को अपेक्षाकृत कम करना और क्षेत्रीय शक्ति का बढ़ना : राज्यों द्वारा सत्ता और संसाधनों के संदर्भ में बढ़ती स्वायत्तता को अभिवृद्ध करने और राजनीतिक प्रणाली के 'वास्तविक' संघीकरण का समर्थन करने की माँग; (ख) वर्षों से चली आ रही एकल दल प्रभावी (प्रभुत्व) प्रणाली का क्रमिक रूप से विघटन; (ग) ढेरों क्षेत्रीय दलों के बन जाने से, उनका प्रक्रिया में परिधि से केंद्र पर अधिक दबाव डालना; (घ) व्यक्तिगत, जाति व धर्म और क्षेत्रीय हित जैसी विभिन्न निष्ठाओं पर आधारित भारतीय दल तंत्र का विघटन; (ङ) केंद्र व राज्यों में समझौता-संस्कृति व अंतरदलीय संबंधों में अस्थिरता के साथ गठबंधन की राजनीति। सकारात्मक पहलू यह रहा कि 'जेंडर' के आयाम को प्रस्तुत करने (स्थानीय स्तर पर महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाकर), गरीब व सामाजिक रूप से उपेक्षित वर्गों को अधिक अधिकार देकर अर्थात् 'सशक्तीकरण' और नागरिकों को बोलने का अधिकार प्रदान करने इत्यादि से, राजनीतिक आधार व्यापक हुआ।

भारतीय समाज की अनेकता और क्षेत्रीय विविधताओं के फलस्वरूप बहु-दल प्रणाली वाली गठबंधन या अल्पसंख्यक राजनीति ने भारत के राजनीतिक शासन में प्रवेश किया। परिणामस्वरूप, छोटे और क्षेत्रीय दल शासन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। गठबंधन की राजनीति से उत्पन्न परिस्थितियों की बाध्यताओं के कारण घटक राज्य अब केंद्र के उपकरण मात्र नहीं है।

उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण जैसे बदलती परिस्थितियों के आत्मसात करने के लिए भारत की राजनीतिक-प्रशासनिक संरचना में व्यापक बदलाव हुए हैं। भले ही राज्य पहले से ही ज्यादा शक्तिशाली हो गए हैं लेकिन अभी भी संसद की सर्वोच्च सत्ता बरकरार है। बदली परिस्थितियों के तहत, वेस्टमिंस्टर मॉडल से संघ परंपराओं की ओर स्पष्ट बदलाव हुआ है। सत्ता के विकेंद्रीकरण और सरकार के कार्यों को राष्ट्रीय स्तर से निचले स्तर तक लाने के लिए संघवाद ने दबाव बनाया है ताकि एक ओर जहाँ प्रतियोगी संघवाद का मार्ग प्रशस्त हो सके और दूसरी ओर से इस प्रतिस्पर्धा से उत्पन्न विवादों और द्वंद्वों को नियमित करने

या सुलझाने के लिए अंतर-सरकारी सहयोग स्थापित हो सके। 1992 के 73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियम इस प्रवृत्ति को उजागर करते हैं।

पिछले दो दशकों में राजनीतिक भागीदारी के विस्तार ने वंचित और उपेक्षित समूहों को राजनीतिक प्रणाली व शासन के सभी स्तरों पर केंद्र में स्थान दिया है। वंचित समूहों के राजनीतिक सशक्तीकरण की प्रक्रियाएँ और कार्यनीतियाँ भी देश के राजनीतिक माहौल पर प्रभाव डाल रही हैं।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू जो वर्तमान विचार-विमर्श में काफी प्रासंगिक है, वह है नौकरशाही व्यावसायीकरण (Bureaucratic Professionalism) का – खासकर उच्चस्तरों पर निरंतर ह्रास। इसके लिए नौकरशाही का राजनीतिकरण काफी हद तक उत्तरदायी है। नौकरशाही का बढ़ता राजनीतिकरण अधिक चिंता का विषय है। नौकरशाह-राजनेता संबंध, जो निरंतर लोकहित की बजाए निजी फायदों की दिशा में काम कर रहे हैं। शासन प्रक्रिया में राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका की भूमिका को स्पष्टतः परिभाषित करने की आवश्यकता है। निश्चित रूप से, राजनीतिक कार्यपालिका को लोकतंत्र में सर्वोच्च शक्ति प्राप्त है लेकिन लोक प्रशासक की आवष्यक स्वायत्तता के साथ इस शक्ति को कुछ सीमाओं में रहना होगा। सामाजिक वर्गों और भारतीय राज्य के बीच सत्ता के संघर्ष के फलस्वरूप भारतीय राज्य कमज़ोर पड़ गया। 2019 के आम चुनावों से राज्य की जटिलता में बदलाव आया। इन चुनावों में केंद्र में केवल एक ही सबसे बड़ी राष्ट्रीय पार्टी को लोगों ने निर्वाचित करके दीर्घकालीन गठबंधन युग को समाप्त कर दिया। लेकिन इस स्थिति के कारण एक अन्य समस्या देश में उत्पन्न हुई, वह थी राज्य क्षेत्र में केंद्र सरकार के अनाधिकार हस्तक्षेप, जिसके फलस्वरूप केंद्र-राज्य के संबंध तनावपूर्ण हो गए। नोटबंदी, जीएसटी लाना जैसे एकपक्षीय निर्णय लेने के कारण केंद्र सरकार को आलोचना का सामना करना पड़ा और ऐसे तनावपूर्व संबंध से देश की अर्थव्यवस्था पर काफी दबाव पड़ा हैं।

सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन को राजनीतिक प्रणाली की उस गतिशीलता को अपनाना चाहिए जिसमें उसका अस्तित्व ही वह कार्य करता हो। इसके अलावा, इसे वैश्वीकरण और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा की ताकतों से निपटने के लिए स्वयं को मज़बूत तथा पुनः जीवित भी करना होगा। लोकतांत्रिक भागीदारी, शासन की संघीय व्यवस्था, और सामाजिक समायोजना पर आधारित भारतीय राजनीतिक-प्रशासनिक प्रणाली को घरेलू (देश की) माँगों और वैश्विक विश्व दोनों की आवष्यकताओं के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया करनी होगी।

- **राज्य का प्रत्यापन (Roll back of the State)**

नव दक्षिणापंथी (New Right) या नव-उदारवादी (Neo-Liberal) दृष्टिकोण राज्य का प्रत्यापन का एक मज़बूत समर्थक है। लोक प्रशासन में 'प्रबंधवाद' (Managerialism) के पुनः प्रचलन के रूप में इस दृष्टिकोण का सुस्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। नव लोक-प्रबंधन ने पारंपरिक लोक प्रशासन की असफलता के कारण इसकी निंदा (भर्त्सना) की है। राज्य के बदलते स्वरूप ने लोक प्रशासन की जटिलता पर भी प्रभाव डाला है।

राज्य को शासन के लिए कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है। पारंपरिक रूप से, राजनीतिक तंत्र के रूपों और विकास के लिए देश के आर्थिक व सामाजिक संसाधनों के उपयोग में सत्ता प्रयोग के तरीकों के लिए शासन का सहारा लिया जाता है। यह राज्य नीतियों की रूपरेखा तैयार करने, निर्मित करने व उसके क्रियान्वयन और सरकारी कार्य निष्पादन में सरकार की हैसियत से भी काम करता है।

भारतीय राजनीति में नए चरण के प्रादुर्भाव के कारण 1990 के दशक से भारतीय प्रजातंत्र चुनौतियों का सामना कर रहा है। एक ओर वैश्वीकरण और आर्थिक सुधारों की चुनौतियाँ हैं, तो दूसरी ओर पहचान राजनीति (Identity Politics) केंद्र पर विरोधी दबाव राज्य के विपरीत दिशाओं में खींचने का प्रयास कर रहे हैं। आर्थिक सुधारों में केंद्र की भूमिका को धीरे-धीरे घटाने पर विचार किया गया है, जबकि पहचान राजनीति बुनियादी सामाजिक सुधारों के एजेंट के रूप में नए राज्य का पुनर्निर्माण करती है। परिणामस्वरूप देश में भारतीय राज्य और शासन के तरीके व्यापक परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं।

हाल में, भारत में राज्य व शासन की वर्तमान विधियाँ दो स्रोतों से चुनौतियों का सामना कर रही हैं : एक, वैश्वीकरण की प्रक्रिया व उदारीकरण की ओर अग्रसर घरेलू आर्थिक सुधार और अर्थव्यवस्था पर राज्य के अधिकारों में कमी और दूसरा, नागरिक समाज के नए रूप का आर्विभाव। इसके अंतर्गत हम देखते हैं कि गैर-सरकारी संगठनों, समुदाय आधारित संगठन की भूमिका ज्यादा सक्रिय है, यहाँ तक कि इसे स्थानीय स्तर के जन आंदोलन के रूप में देखा जा सकता है जो कई विकास कार्यों को अपने हाथों में लेना चाहते हैं, जो अब तक राज्य के अंतर्गत आते थे।

1980 के दशक की शुरुआत से पूरे विश्व में सामाजिक और राजनीतिक विचारधारा में दो अलग तरह के विन्यास देखे गए हैं। एक ओर, आर्थिक क्षमता हासिल करने के लिए राज्य को पीछे हटाने का दबाव बन रहा है और दूसरी ओर, समाज के सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर उपेक्षित वर्गों के सशक्तीकरण और उनके हितों की सुरक्षा के लिए व्यापक सामाजिक व राजनीतिक कार्य करने की माँगे निरंतर उठ रही है।

पिछले दो दशक अर्थव्यवस्थाओं में परिवर्तन के साक्षी हैं। अर्थव्यवस्था नियंत्रित से बाजारोन्मुखी हुई। इससे यह स्पष्ट हुआ कि पारंपरिक राज्य प्रारूप (Model) नागरिकों को संतोष प्रदान करने वाली प्रभावी नीतियों, कार्यक्रमों व सेवाओं की रूपरेखा बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने में असफल रहा है। सार्वजनिक प्रणालियों व संस्थाओं के संगठन व प्रबंधन में परिवर्तन लाने के लिए एक के बाद एक कई सुधार शुरू किए गए हैं। सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार उपलब्ध कराया गया, क्षमता बरकरार रखना और सार्वजनिक खर्चे में कमी सुधार प्रक्रिया के महत्त्वपूर्ण घटक बन गए। राज्य बनाम बाज़ार की कार्यकुशलता, सरकारी गतिविधियों में बढ़ता प्रबंधकीय विन्यास और कई प्रशासनिक समस्याओं के समाधान के रूप में निजीकरण को बढ़ावा देना जैसी अवधारणाओं की सार्वजनिक तंत्र प्रबंधन में लोकप्रियता बढ़ी है।

ऐसी संभावना है कि भारत में आने वाले दिनों में सरकारी संगठन, गैर-सरकारी संगठन, नागरिक समाज, निजी क्षेत्र व अन्य संस्थाओं के संयुक्त प्रयास से प्रभावी प्रशासन क्रियान्वित होगा। हाल के वर्षों में सरकारों द्वारा विकास कार्यों के कार्यान्वयन में नागरिक समाज को शामिल करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। इससे यह अभिप्राय नहीं है, कि यह राज्य की सत्ता का ह्रास है। राज्य अपनी क्षमता का इस्तेमाल लोक सेवा संविदाकार (Contractor) के रूप में गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से करता है। पुनःपरिभाषित राज्य की मुख्य भूमिका गैर-सरकारी संगठन, नागरिक समाज और निजी क्षेत्र के सहयोग के साथ स्थायी मानव विकास करना है। यह देखा गया है कि नए उदारीकृत राजनीतिक माहौल में राज्य की भूमिका समाप्त नहीं हुई बल्कि उसका स्वरूप बदल गया है। सरकार राज्य का सक्रिय हिस्सा है। भारत में अब प्रशासन को लोकतांत्रिक बनाने और इसे ज्यादा से ज्यादा समाज केंद्रित और नागरिक हितैषी बनाने की प्रवृत्ति है।

- **विनियामक राज्य की भूमिका (Role of Regulatory State)**

आर्थिक गतिविधि में राज्य की भूमिका के आधार पर उसे व्यापक रूप से उत्पादक राज्य (Producer-State), विनियामक राज्य (Regulator State), फेसिलिटेटर राज्य और कल्याणकारी राज्य में वर्गीकृत किया जा सकता है। उत्पादक राज्य में व्यापारिक वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादक राज्य आते हैं। विनियामक राज्य में बाज़ार प्रतिभागियों की आर्थिक गतिविधियों को शासित, प्रोत्साहित या हतोत्साहित करनेवाले नियमों को तय और लागू करते हैं, फेसिलिटेटर राज्य (Facilitator State) में पुलिस, न्याय, सड़कों और रोशनी जैसी सार्वजनिक वस्तुओं के प्रावधान सम्मिलित हैं और कल्याणकारी राज्य, शिक्षा व स्वास्थ्य जैसी गुणवत्ता वाली वस्तुओं की एक विविधता सुनिश्चित करते हैं।

एक ''उत्पादक'' के रूप में राज्य की भूमिका कम करने के कई प्रयास किए गए। उसी तरह नियामक के रूप में कुछ क्षेत्रों में राज्य की भूमिका का विस्तार हुआ और नियमितीकरण (Deregulation) कुछ क्षेत्रों में हुआ है। औद्योगिक लाइसेंसिंग को रद्द करना और व्यापार का उदारीकरण, नियामक राज्य का प्रत्यापन के सर्वोत्तम उदाहरण हैं। लेकिन कई क्षेत्रों में विस्तार भी हुआ है। उदाहरण के लिए, दूरसंचार, बंदरगाह व विद्युत के क्षेत्रों में समुचित संविधियों के तहत राष्ट्रीय स्तर के विनियामक प्राधिकरणों की स्थापना की गई। इसी तरह की पहल कुछ और क्षेत्रो में करने के विचार किए जा रहे हैं। विनियामक प्राधिकरणों से यह अपेक्षा की जा रही है कि वे संबंधित मन्त्रालय या सार्वजनिक या निजी उपक्रम से स्वतंत्र होकर प्रवेश और विशेष रूप से टैरिफ (प्रशुल्क) की संचालन परिस्थितियों के लिए एक ऐसी संरचना उपलब्ध कराएँ जो उन निवेशकों और उपभोक्ताओं को आश्वासन व संरक्षण सुनिश्चित करें जिनके हित में एकाधिपत्य जैसी परिस्थिति में अक्सर विवाद व झगड़ा/प्रतिस्पर्धा और आवष्यक सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना सरकार का दायित्व हो।

विश्व आर्थिक उदारीकरण के 1990 के बाद के युग में भारत ने कुछ ऐसी सेवाओं की आपूर्ति व क्षमता बेहतर बनाने के लिए निजी क्षेत्र को अनुमति प्रदान करने का निर्णय लिया था जो पहले सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा प्रदान की जा रही थीं। सरकार की भागीदारी को कम करने, निर्णयन को राजनीति से बाहर रखने, तकनीकी विशेषज्ञता को स्थान देने के लिए दूरसंचार, वित्त, मूलभूत ढाँचे आदि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में विनियामक निकाय गठित किए गए हैं। इनमें से कुछ, बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकरण (Insurance Regulatory and Development Authority-IRDA), भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (Securities and Exchange Board of India-SEBI), टेलीकॉम विनियामक बोर्ड, इत्यादि है। इन संस्थाओं पर सभी नागरिकों को मूलभूत सुविधाओं व सेवाओं के प्रावधान से संबंधित व्यापक दायित्व और शक्तियाँ सौंपी जा रही हैं। विनियामक ढाँचे का उद्देश्य अहितकारी प्रतिस्पर्धा से बचने और नागरिकों के लिए सेवाएँ व उत्पादों के उचित मूल्य को सुनिश्चित करना है। आर्थिक वृद्धि के लिए अतिरिक्त आर्थिक संसाधन आकर्षित करने के साथ-साथ सार्वजनिक निजी भागीदारी के लिए एक अनुकूल माहौल तैयार करना विनियामक संस्थाओं का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है।

विनियामक ढाँचे को सभी निवेशकों के लिए सम-स्तरीय क्षेत्र मुहैया कराना, उपभोक्ताओं को कम कीमत पर सक्षम सेवाएँ मुहैया कराना चाहिए। मुख्य उद्देश्य विनियामक प्रक्रिया में लोक विश्वास पैदा करना है। विनियामकों से आशा की जाती है कि वे अर्द्ध-न्यायिक, निष्पक्ष और पारदर्शी रूप से कार्य कर सकें। इस प्रकार, दूरदर्शी व विवेकपूर्ण मापदंडों वाले एक संवेदनशल और सुचारू रूप से काम करने वाले विनियामक तंत्र की आज आवश्यकता है।

- **नव प्रबंधकवाद और प्रतिस्पर्धात्मक परिवेश का उद्भव (Rise of New Managerialism and Competitive Environment)**

1980 और 1990 के दशक से लेकर आज तक पारंपरिक लोक प्रशासन विधि में अपर्याप्ताओं के फलस्वरूप लोक प्रशासन में एक प्रबंधकीय दृष्टिकोण का उद्भव हुआ। नवीन लोक प्रबंधन (NPM) विचारधारा राज्य या सरकार संचालित विकास की अपेक्षा अधिक बाज़ार संचालित विकास के पक्षधर के रूप में उभरी है। यह सरकार के कई कार्यों के 'डाउनसाइजिंग' (विस्तार निम्नीकरण) और 'निजीकरण' के माध्यम से कमज़ोर और ज्यादा निष्पादन-उन्मुखी सरकार की समर्थक है। चूँकि बाज़ार अपेक्षाकृत अधिक लचीले और लागत प्रभावी रूप से कार्य कर सकता है, अतः सरकार को 'कर्ता' की बजाए 'शक्ति प्रदाता' (Enabler) के रूप में स्वयं को पुनः व्यवस्थित करना चाहिए।

प्रबंधकीय दृष्टिकोण का तर्क है, कि नियमों और सोपानक्रमिक प्राधिकार से प्रशासकीय कार्य को विनियमित करने की बजाए देशों को सार्वजनिक प्रणाली की क्षमता में सुधार के लिए दो व्यापक उपागमों (दृष्टिकोण) का अनुसरण करना चाहिए। पहला, सार्वजनिक प्रणालियों की उत्पादन कार्यप्रणाली को बढ़ाना और दूसरा सार्वजनिक सेवा वितरण में सूचना प्रौद्योगिकी का व्यापक रूप से उपयोग करना। प्रबंधकीय दृष्टिकोण में सम्मिलित मुख्य घटक इस प्रकार हैंः

i) निष्पादन भुगतान सहित मानव संसाधन में सुधार लाना

ii) निर्णयन प्रक्रिया में कर्मचारियों को शामिल करना

iii) सख़्ती कम करना (थोड़ी ढील बरतना) लेकिन कार्य-निष्पादन के लक्ष्य निर्धारित करना

iv) सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना

v) उपभोक्ताओं को सेवाएँ प्रदान करना

vi) उपभोक्ता प्रभार (यूजर चार्ज) लगाना

vii) अनुबंध पर काम कराना (Contracting Out), और

viii) एकाधिपत्य कम करना

आधुनिक सरकारों ने प्रशासन को अधिक उद्यमशील व व्यवसाय उन्मुख बनाने के लिए प्रशासन को नवीन रूप प्रदान किया है। इसके लिए अप्रचलित पहलों को छोड़ने व निकाल देने, कम में भी और अधिक करने की इच्छा व नए विचारों को अपनाने की उत्सुकता की आवष्यकता है। सरकारों का स्वरूप प्रतिस्पर्धात्मक होना चाहिए और उन्हें निजी क्षेत्र और सरकारी अभिकरण एजेंसियों के बीच सकारात्मक प्रतिस्पर्धा को स्वीकार करना होगा। भारत में सुधारों का आशय सार्वजनिक प्रणाली में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना, कार्य-निष्पादन के स्तर में वृद्धि और लागतों को कम करना है। सार्वजनिक क्षेत्र की क्षमता, सुधारों की प्रक्रिया का मुख्य मुद्दा बन चुका है। बाज़ार आधारित प्रोत्साहनों के माध्यम से परिवर्तन लाने के लिए सेवा वितरण (प्रदान करने) में प्रतिस्पर्धा को सम्मिलित करना सार्वजनिक प्रणाली की कार्यप्रणाली में सुधार लाने की एक कार्य नीति है।

भारत में निजी क्षेत्र और बाज़ार क्रियाविधियों को और अधिक बढ़ाने की दिशा में व्यापक परिवर्तनों की शुरुआत की गई हैं। सार्वजनिक सेवा वितरण में प्रतिस्पर्धा को सम्मिलित करने के लिए राज्य के अधिकार क्षेत्र में जो अभी तक महत्त्वपूर्ण दायित्व थे, उन्हें निजी या गैर-सरकारी क्षेत्रों में स्थानांतरित किया गया है। विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा लगाई

गई प्रतिबंधताओं के भाग के रूप में भारत सहित तीसरी दुनिया के देशों ने प्रबंधकीय सुधारों की शुरुआत की।

1991 में भारत में संरचनात्मक समायोजन और स्थायित्व कार्यक्रम (Structural Adjustment and Stabilisation Programme) का उद्देश्य सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रमों की बजट सहायता को कम करना, विनिवेश निगमीकरण और कई गतिविधियों (कार्यों) को बाहर से कराना और सरकार द्वारा महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों (Core Sector) पर ध्यान केंद्रित करना था। उपभोक्ता प्रभारों की शुरुआत की गई और स्वास्थ्य व शिक्षा जैसी सार्वजनिक सेवाओं पर मिलने वाली आर्थिक सहायता में कटौती की गई। अनुक्रियाशील और नागरिक हितैशी प्रशासन उपलब्ध कराने के लिए नागरिक घोशणा पत्र (Citizens' Charter) प्रस्तुत करना, शिकायत निवारण तंत्र को मज़बूत बनाना, और सार्वजनिक सेवा वितरण की विभिन्न गतिविधियों में ई-शासन तरीकों की पहल करने जैसे कई प्रयास किए गए। ई-शासन के विभिन्न प्रयासों के बारे में हम पाठ्यक्रम की इकाई-8 में विस्तारपूर्वक बताएंगे। इस संदर्भ में, सार्वजनिक तंत्रों के प्रबंधकों को प्रतिस्पर्धा को स्वीकार करने और अपने निष्पादन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निष्पक्ष मनोवृत्ति (रवैया) अपनाने की आवश्यकता है।

बाज़ार केंद्रित सुधारों का उद्देश्य उपभोक्ताओं को सेवा प्रदान करने की बजाए उन्हें सशक्त करना या अधिकार प्रदान करना है। सुधार ऐसे हों जो सार्वजनिक प्रणालियों में सक्षमता व प्रभावोत्पादकता लाने वाले और जन-केंद्रित, विकेंद्रीकृत, सहभागी और विकासोन्मुखी हों।

- **नागरिकों के अधिकार (Citizens' Rights)**

प्रबंधकीय उपागम से संबंधित पहले घटक का उद्देश्य उच्च गुणवत्ता वाली सेवाएँ प्रदान करना है जिन्हें नागरिक महत्त्व देते हैं। सार्वजनिक प्रणाली की मौलिक आवश्यकता नागरिकों को स्थिति से अवगत कराने की है। इसमें निष्पादन के घोषित मानदंड बनाए रखने, सूचना का आदान-प्रदान, खुलापन, विकल्प उपलब्ध कराने वाला तंत्र और नागरिकों से परामर्श करना शामिल है। सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं में व्यापक पारदर्शिता आज की आवश्यकता है।

प्रजातांत्रिक शासन में यह अपेक्षा की जाती है, कि लोग सरकारी प्रक्रिया में सहभागी हों। लोगों की प्रभावी भागीदारी के लिए सूचना तक पहुँच, पूर्व शर्त है। भारत में सूचना के अधिकार, नागरिक घोशणा पत्र प्रस्तुत करना, सभी स्तरों पर वर्तमान शिकायत निवारण तंत्र को सुदृढ़ करना, नागरिकों का – खासकर कमज़ोर वर्गों का सशक्तीकरण, नागरिक समूह, उपभोक्ता संगठनों व सामाजिक समूहों के साथ निकटतम संपर्क जैसे प्रयास किए जा चुके हैं ताकि समस्याओं की पहचान कर उनका तुरंत समाधान सुनिश्चित किया जा सके। इस प्रकार, भारत में उत्तरदायित्व, सूचना के अधिकार और बेहतर निष्पादन व सार्वजनिक तंत्र में एकीकरण के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आम राय उभरी। पिछले एक दशक में सूचना के अधिकार (Right to Information) पर काफी काम हुआ है। प्रशासन में पारदर्शिता और अनुक्रियाशीलता लाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा भारत में सूचना का अधिकार अधिनियम बनाया गया। इस पर विस्तृत चर्चा इस पाठ्यक्रम की इकाई-1 में की गई है।

विभिन्न सार्वजनिक तंत्रों द्वारा उपलब्ध कराई गई सेवाओं को उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिए नागरिक घोशणा पत्र कार्यक्रम की शुरुआत 1991 में की गई। केंद्र और राज्य सरकारों ने अपने विभिन्न मंत्रालयों और उनसे संबंधित या अधीनस्थ कार्यालयों में नागरिक घोशणा पत्र को चरणबद्ध रूप में प्रस्तुत किया। इसका उद्देश्य स्पष्ट सेवा मानदंडों की ओर ध्यान देना, उन्हें प्रकाशित और उन पर काम करना है। इसके अतिरिक्त, सार्वजनिक

तंत्र जैसे सूचना मुहैया कराने के लिए उपभोक्ता सेवा केंद्रों की स्थापना, वेब आधारित बहु-उपयोगिता वाले कंप्यूटरीकृत केंद्रों की स्थापना, बिलों का भुगतान, रिटर्न भरने, फार्म डाउनलोड करने व जमा कराने जैसी विविध प्रकार की सेवाओं के लिए सार्वजनिक तंत्र कार्यरत हैं ताकि सेवा सक्षम, जवाबदेह और नागरिक हितैशी बन सके। प्रबंधकीय शासन के युग में नागरिकों को सशक्त करना महत्त्वपूर्ण है।

भारतीय राज्यों की शक्ति समग्र लोकतांत्रिक विन्यास, नागरिक स्वतंत्रताओं, संघीय संरचना, स्वतंत्र न्यायपालिका, सार्वजनिक, निजी, सहकारी, स्वयंसेवी संस्थाओं, संस्थागत और अन्य गैर-सरकारी कार्यकर्ताओं की संगठनात्मक विविधता में निहित है, जो परीक्षा की घड़ी में न केवल हमारे साथ खड़े रहते हैं बल्कि अतीत के साथ सातंत्य और भावी पुनरुद्धार के लिए सुदृढ़ प्लेटफार्म भी प्रदान करते हैं।

बोध प्रश्न–1

नोटः– क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिये।

ख) इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों को मिलाइए।

1) लोक प्रशासन में प्रबंधकीय उपागमों के घटक कौन से हैं?

....

....

....

2) विनियामक एजेंसियों के कार्यों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

3.3 सामाजिक संदर्भ

सार्वजनिक प्रणालियों की कार्यवाही को समझने के लिए देश की सामाजिक-आर्थिक सन्दर्भ की व्यापक जानकारी होना अति आवश्यक है। प्रभावी सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन निर्मित करने व क्रियापद्धति की क्षमता को बनाए रखने के लिए उन सामाजिक-सांस्कृतिक व आर्थिक कारकों को जानना बहुत आवश्यक है, जिसमें सार्वजनिक प्रणालियाँ विद्यमान हैं। जहाँ तक भारतीय सार्वजनिक प्रबन्धन प्रणाली का प्रश्न है इसे समझने के लिए हमें देश के सामाजिक-आर्थिक कारकों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करना होगा जोकि प्रबन्धकीय प्रणाली की संरचना व उसके परिचालन की भूमिका निर्मित करते हैं और उसको सर्वाधिक प्रभावित करते हैं।

किसी देश का राजनीतिक घटनाक्रम, संवैधानिक कानून तथा प्रशासनिक नियम व विनियम इसकी सामाजिक परम्पराओं, संस्कृति व सामाजिक मूल्यों से अत्यधिक प्रभावित होते हैं। भारतीय स्थिति के सन्दर्भ में, सार्वजनिक प्रणालियों का प्रबन्धन भारतीय समाज–विशेष रूप से धर्म, जाति और महिलाओं की भूमिकाओं, परिवार और ग्रामीण-शहरी अंतरापृष्ठ से संबद्ध किया जाना चाहिए।

- **धर्म (Religion)**

भारत महाद्वीपीय आयामो का देश है। यह बहुजाति संपन्न (Multi-ethnic) समाज है। यह विविधता में एकता के सिद्धांत में विश्वास रखता है। सभी धर्मों के लिए सम्मान, भारतीय समाज का एक महत्त्वपूर्ण व सकारात्मक पहलू है। समय-समय पर पैदा होने वाले साम्प्रदायिक तनाव के दौरान विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच कानून व्यवस्था एवं साम्प्रदायिक सौहार्द बनाए रखने में सार्वजनिक प्रणाली की मज़बूती की परीक्षा होती है।

- **जाति (Caste)**

भारत ऐतिहासिक रूप से बहुसमुदायवादी (Pluralistic) समाज के रूप में विकसित हुआ जिसमें विषमस्तरीय रूप से असंख्य जातियों और उपजातियों के समूह हैं। जाति-प्रथा भारतीय समाज की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। जाति लोगों के सामाजिक व्यवहार को नियंत्रित करती है। सदियों से भारतीय समाज में यह एक प्रमुख कारक रहा है। स्वतंत्रता के बाद, यह कारक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक कारक बन गया है। कई राज्यों में, यह राजनीति और चुनावों, राजनीतिक दलों के गठन और यहाँ तक कि सार्वजनिक नियुक्तियों और सामान्य प्रशासनिक मामलों में भी प्रविष्ट हो गया है।

सार्वजनिक प्रणाली के प्रबंधक जाति, समुदाय, धर्म, भाषा इत्यादि से जीविका प्राप्त करने वाली शक्तियों से अवगत कराते हैं। हाल ही में हुए अधिकांश शोध भारत में जाति को शक्तिशाली ताकत मानते हैं, जो देश के विकास के पिछले दशकों में कुछ पहलुओं में कमज़ोर तथा कुछ पहलुओं में सुदृढ़ हुआ है। किन्तु अब जाति के अर्थ बदल चुके हैं। वर्तमान में जाति को सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में नहीं बल्कि राजनीतिक-प्रशासनिक दृष्टिकोण से भी देखा जा रहा है।

- **भाषा (Language)**

भाषाओं की विविधता (Language Diversity) भारत की विशेषता है। भारत में लगभग 1600 भाषाएँ एवं उनकी उपभाषाएँ (बोलियाँ) विद्यमान हैं। भारत की लगभग तीन-चौथाई आबादी वे भाषाएँ बोलती हैं जो संस्कृत पर आधारित हैं। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएँ दी गई हैं। भारत में भाषाओं के आधार पर विभिन्न राज्यों की रचना व क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का उभरना भाषायी विविधता की ही दूरगामी प्रतिक्रिया है।

- **संयुक्त परिवार प्रथा (Joint Family System)**

सभी समाजों में परिवार एक मूलभूत इकाई होती है। संयुक्त परिवार प्रथा भारतीय सामाजिक संरचना के प्रमुख स्तंभों में से एक स्तंभ माना जाता था। सामाजिक जीवन में संयुक्त परिवार प्रथा की विशेषताएं सार्वजनिक प्रणालियों पर भी प्रभाव डालती हैं। संयुक्त परिवार प्रथा में विद्यमान निष्ठाएँ सार्वजनिक व्यवस्था की निष्पक्षता के लिए चुनौती प्रस्तुत करती है। किंतु साथ ही साथ संयुक्त परिवार की परस्पर सौहार्द व मिलजुल कर रहने की एक विशेषता किसी संस्था में सामूहिक रूप से कार्य करने के लिए अति महत्त्वपूर्ण व लाभप्रद है।

- **महिलाएँ (Women)**

महिलाएँ समाज के सामाजिक-आर्थिक विकास का एक अभिन्न अंग हैं। वर्तमान में महिलाएँ स्वतंत्र रूप से (आत्मनिर्भर) कार्य करने के अधिक अवसर प्राप्त करने हेतु दृढ़ प्रयास व आंदोलन कर रही हैं। राज्य की जिम्मेदारी है कि वे महिलाओं को सार्वजनिक रोज़गार में समान अवसर प्रदान करें व उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाएं। रोज़गार क्षेत्र में महिला

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

कर्मचारियों का अनुपात उनकी आबादी के अनुरूप नहीं है। महिलाओं के सर्वांगीण विकास की दिशा में प्रेरक परिवेश (Conducive Environment) निर्मित करने के लिए राज्य और उसके प्रशासन को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाना होगी।

हाल ही में शासन व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता की स्थिति में कुछ सुधार हुआ है और आज महिलाएँ सार्वजनिक प्रणालियों के प्रबंधन में महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्यरत हैं। अपनी कुशलताओं, अन्तर्निहित प्रतिभाओं व योग्यताओं के दम पर सार्वजनिक व्यवस्था की कार्यकुशलता को बढ़ाने में महिलाएँ महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। कुछ वर्षों से कार्य बल (Workforce) और सरकारी विकास कार्यक्रमों में महिला सहभागिता निरंतर बढ़ रही है, जिससे क्षतिपूर्ति, कल्याण-नीतियों और अन्य संबद्ध मुद्दों में प्रशासनिक चुनौतियाँ का सामना करना पड़ रहा है। 'Engendering' विकास के संदर्भ में, विकास गतिविधियों में बहुत अधिक संख्या में महिलाएँ शामिल हो रही हैं। भारत की कुल जनसंख्या में महिलाओं का प्रतिशत 50 प्रतिशत से भी अधिक है, अतः देश का विकास महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों और स्तर की उन्नति (सुधार) पर काफी हद तक निर्भर करता है। विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों के अलावा, महिलाओं के हित व लाभार्थ समय-समय पर कई नीतियाँ व कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005, मुस्लिम महिलाओं के विवाह अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए तीन तलाक विधेयक, 2019, इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम हैं। लोकसभा में महिलाओं के लिए 30% आरक्षण की माँग की जा रही है। सभी राजनीतिक दलों में इस मुद्दे पर सहमति (एकमत) तक पहुंचने का दबाव है।

- **ग्रामीण-शहरी सम्बन्ध (Rural-Urban Interface)**

भारत में न केवल ग्रामीण-शहरी भेदभाव ही विद्यमान है, अपितु ग्रामीण-शहरी द्वैतवाद भी विद्यमान है। सामाजिक-आर्थिक विकास के स्तरों में भी क्षेत्रीय विषमताएँ दृष्टिगत होती हैं। ग्रामीण भीतरी प्रदेशों व शहरी क्षेत्रों के बीच सार्थक व उद्देश्यपूर्ण सम्बन्धों के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। शहरी और ग्रामीण समुदायों के बीच क्रिया, प्रतिक्रिया व अतःक्रिया को सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक स्तरों पर पहचाना जा सकता है। प्रौद्योगिकी तथा संचार साधनों में हुई पर्याप्त उन्नति ने गाँवों और शहरों के बीच की दूरी को काफी कम कर दिया है। गाँवों व शहरों के बीच संपर्क बढ़ा है। अतः गाँवों व शहरों के विकास के लिए एक साथ कार्य करना अत्यंत आवश्यक है।

बढ़ते हुए शहरीकरण, समाज, कल्याणकारी मुद्दे व सरोकार और सामाजिक संरचनात्मक बदलाव के फलस्वरूप से नए सामाजिक मुद्दों से निपटने के लिए पिछले कुछ दशकों में भारत में सरकारी कार्यक्रम का विस्तार देखा जा सकता है। वृद्धों व दिव्यांगजनों की देखरेख की समस्याओं पर सरकारी एजेंसियों ध्यान दे रही हैं और वृद्धों व संवेदनशील व्यक्तियों के लिए कई नये सरकारी कार्यक्रमों की शुरुआत की गई है।

ग्रामीण विकास और सामाजिक विकास के अंतर्गत स्वास्थ्य, पोषण और शिक्षा, औद्योगिक विकास और अधिकांश विकासात्मक गतिविधियों का दायित्व राज्य पर होने के फलस्वरूप अत्यधिक प्रशासनिक विस्तार हुआ है। समाज की प्रगति ने सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं के लिए नई चुनौतियाँ प्रस्तुत की है, जिससे सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन का कार्यक्षेत्र व्यापक हो गया है।

प्रशासन और समाज के बीच संबंध कभी भी स्थिर नहीं रहा। नई सामाजिक स्थितियों से प्रशासन सदैव प्रभावित होता है। बाल श्रम की रोकथाम व उन्मूलन, छुआछूत (अस्पृश्यता), बंधुआ मज़दूर और अन्य अप्रिय व हानिप्रद सामाजिक प्रचलन जैसे मुद्दे निरंतर बढ़ रहे हैं और

इन पर प्रशासनिक कार्यवाही करने की आवष्यकता के कारण भारत में लोक प्रशासन का कार्यक्षेत्र निरंतर व्यापक हो रहा है। 'अनन्य (एकमात्र)' (Exclusive) के स्थान पर ज्यादा 'समावेशी' (Inclusive) लोक प्रशासन हेतु स्थितियाँ उत्पन्न करने के लिए चल रहे मुख्य प्रयास एक अन्य नये विकास हैं। इसका अभिप्राय है कि अब सरकार के ज्यादा विकेंद्रीकृत, सहभागी, जेंडर-संवेदी और सामाजिक रूप में अपेक्षित वर्ग के लिए आवष्यकताओं के प्रति सरकार को ध्यान केंद्रित करने पर कार्य हो रहा है। यह प्रवृत्ति राज्य-समाज सहक्रिया के ज्यादा समीप प्रतीत होती है ताकि अधिक प्रभावशाली और यथार्थ लोकतंत्र को प्राप्त किया जा सके। सामाजिक-आर्थिक और राजनैतिक मुद्दों का सामना करने के लिए सामाजिक सहभागिता सबसे ठोस व सुदृढ़ उपायों में से एक है।

3.4 आर्थिक संदर्भ

आर्थिक कारक सार्वजनिक प्रणाली के स्वरूप, संगठन और कार्य प्रणाली को प्रभावित करते हैं। देश की आर्थिक व्यवस्था को इसके कानूनी एवं प्रशासनिक प्रणाली द्वारा नियंत्रित किया जाता है। आर्थिक कारक और सार्वजनिक प्रणाली दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। आर्थिक विशेषताओं का स्वरूप देश व इसके इतिहास के अनुरूप होता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से भारत एक कृशि प्रधान देश है। आज भी देश की जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि व इससे संबंधित कार्यों पर निर्भर है। योजनाबद्ध विकास के माध्यम से संतोशजनक आर्थिक प्रगति के बावजूद भारत में आज भी गरीबी, अशिक्षा, बेरोज़गारी साधनों की सीमितता जैसे मुद्दे भारतीय अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहे हैं। तेज़ी से बढ़ती हुई जनसंख्या ने आर्थिक प्रक्रियाओं (सुधारों) द्वारा प्राप्त की गई उपलब्धियों को आंशिक रूप से कम कर दिया है। भारत में आर्थिक प्रणाली के निम्नलिखित कारक हैं, जिनमें सार्वजानिक प्रणाली कार्य करती है।

- **कृषि आधारित अर्थव्यवस्था (Agriculture-based Economy)**

राष्ट्रीय आय में कृशि क्षेत्र के योगदान को प्रायः आर्थिक विकास के सूचक के रूप में देखा जाता है। कृषि क्षेत्र का योगदान ही भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास का आधार है। वस्तुतः कृषि विकास क्षेत्रीय विविधता की महत्त्वपूर्ण पूर्व-शर्त हैं।

भारत की जनसंख्या का अधिकांश भाग गाँवों में रहता है। भारतीय जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग आज भी कृषि और भूमि पर निर्भर करता है। भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि पर निर्भर है और यह लघु कृषक उत्पादन (Small-scale Peasant Production) प्रधान है। भारत की अर्थव्यवस्था काफी हद तक वर्षा, अनुकूल जलवायु-परिस्थितियों और कुछ सिंचाई संबंधी सुविधाओं पर निर्भर करती है जिनका विकास योजनाबद्ध आधार पर किया जाता है।

कृषि क्षेत्र हमेशा से भारतीय अर्थव्यवस्था की बुनियाद है। वैश्वीकरण ने देश के कृषकों की स्थितियों पर प्रभाव डाला। कृषकों को उनके उत्पाद की लाभकारी कीमतें नहीं मिल रही हैं। सरकार द्वारा कृषक समुदाय को आर्थिक सहायताएँ व सहायक प्रणालियाँ उपलब्ध कराए जाने के बावजूद किसान-आत्महत्याओं की घटनाएँ बढ़ रही हैं। हाल के किसानों के आंदोलनों में उनके सरोकारों और अन्य संबंधित अन्य मुद्दे उठाएं जा रहे हैं। सरकार को कृषि को एक उद्योग के रूप में मान्यता प्रदान करनी चाहिए और किसानों को परिवर्तनशील परिदृश्य में पारंपरिक फसलों से वाणिज्यिक फसालों की पैदावार करने की ओर अग्रसर होना चाहिए।

भारतीय कृषि क्षेत्र अन्य कई उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति करता है। हाल के वर्षों में खाद्य प्रसंस्करण उद्योग आय ओर रोज़गार के लिए नए अवसर पैदा कर रहा है व इनका महत्त्व दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है।

- **गरीबी (Poverty)**

गरीबी को एक सामाजिक परिघटना के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें समुदाय या व्यक्ति के एक वर्ग के पास वित्तीय संसाधनों का अभाव होता है और जीवन की आधारभूत ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त साधन नहीं होते हैं। वार्षिक मानव विकास सूचकांक रिपोर्ट, 2020 में कुल 189 देशों में से भारत का 131वाँ स्थान है। 2019 में यह दर्शाता है कि भारत की जनसंख्या का 6.7% गरीबी रेखा से नीचे है। स्थायी विकास के लक्ष्य बताते हैं, कि निर्धनता को समाप्त करना 2030 के एजेंडा के लक्ष्यों में से एक है। भारत ने ग्रामीण निर्धनता को लक्षित करके कई कार्यक्रम शुरू किए हैं, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता अत्यधिक है। इनमें रोज़गार, स्व-रोज़गार, खाद्य-सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम शामिल हैं।

- **बेरोज़गारी (Unemployment)**

भारत में अधिकांश बेरोज़गारी संरचनात्मक है। रोज़गार की तलाश में श्रम-बाज़ार में प्रवेश करने वाले लोगों की संख्या तेज़ी से बढ़ी है, परन्तु मंद आर्थिक विकास के कारण रोज़गार के अवसर इस तेजी के साथ नहीं बढ़ रहे हैं। इसलिए देश में बेरोज़गारी काफी तेज़ी से बढ़ी है। ये देखा गया है कि देश में मानव संसाधन विकास और जनशक्ति नियोजन के बीच एकीकरण नहीं है, परिणामस्वरूप, उपलब्ध नौकरियाँ और नौकरी पाने वालों के बीच बेमेल (Mismatch) नहीं है। अतः, देश में बढ़ती युवा बेरोज़गारी की समस्या को दूर करने के लिए, युवाओं को रोज़गार योग्य कौशल प्रदान करने हेतु व्यापक स्तर पर कौशल विकास कार्यक्रम और प्रशिक्षण गतिविधियाँ करनी होंगी। राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (National Skill Development Corporation) एक अलाभकारी संगठन है, जिसे सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) की पहल के तहत, कौशल विकास एवं उद्यमशीलता मंत्रालय के अंतर्गत स्थापित किया गया है। इसका उद्देश्य गुणवत्त व्यावसायिक संस्थानों के निर्माण को उत्प्रेरिक करके कौशल विकास को बढ़ावा देना है तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण पहलों के लिए वित्त पोषण भी प्रदान करता है। विश्व स्तर पर कोविड–19 सर्वव्यापी महामारी की स्थिति के परिणामस्वरूप नौकरियों और आजीविका की क्षति हुई है जिसने बेरोज़गरी को बढ़ाया है।

- **औद्योगिक नीति प्रस्ताव (Industrial Policy Resolution)**

''औद्योगिक नीति'' की संकल्पना व्यापक है क्योंकि इसमें देश के औद्योगिक उपक्रमों का मार्गदर्शन करने वाली सभी नीतियाँ, नियम, कानून, सिद्धान्त आदि सम्मिलित होते हैं जो औद्योगीकरण के स्वरूप को आकार प्रदान करते हैं। इसके अंतर्गत राजकोषीय और मुद्रा नीति, प्रशुल्क नीतियों, श्रम नीति आदि शामिल हैं जो सरकार के न केवल बाहरी बल्कि सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में सहायता के रवैये को प्रतिबिंबित करती है।

औद्योगिक नीति प्रस्ताव 1948 में एक मिश्रित अर्थव्यवस्था का प्रस्ताव किया गया जिसमें कुछ निजी क्षेत्र के लिए आरक्षित किया गया व कुछ सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित किया जाय। सरकार ने 1970 व 1980 के दशकों में औद्योगिक नीति को उदार बनाना शुरू किया था। 1991 में नई औद्योगिक नीति घोषित करने के साथ एक प्रबल उदारीकरण की शुरुआत की गई। नई औद्योगिक नीति का प्रमुख उद्देश्य उद्योगों को अवांछनीय जाल के बंधनों से मुक्त करना व भारतीय अर्थव्यवरथा को अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं से जोड़ने के मद्देनज़र उदारीकरण को प्रस्तुत करना, क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश पर प्रतिबंध समाप्त करना और

साथ ही साथ एकाधिकार के प्रतिबंधों तथा प्रतिबंधित व्यापार प्रचलनों से घरेलू उद्यमों को मुक्त करना है।

औद्योगिक नीति प्रस्तावों का मुख्य उद्देश्य उद्योगीकरण में तेज़ी लाना, विभिन्न क्षेत्रों में संतुलित विकास, धन के केंद्रीयकरण पर रोक, कुटीर, ग्रामीण तथा छोटे लघु उद्योगों का विकास व विस्तार है।

- **निजी क्षेत्र सहभागिता (Private Sector Participation)**

राज्य आर्थिक क्षेत्र में नीतियों का निर्धारण इस प्रकार से करते हैं कि समुदाय के भौतिक संसाधनों का वितरण व नियंत्रण बेहतर हो तथा संपदा का केन्द्रीयकरण कुछ गिने चुने हाथों में न हो जाए। यद्यपि राज्य ने समाजवादी सामाजिक ढाँचे को स्थापित किया है, फिर भी ये निजी उद्यम का संपूर्ण उन्मूलन नहीं कर सकते। भारतीय अर्थव्यवस्था एक मिश्रित अर्थव्यवस्था है जहाँ पर निजी व सार्वजनिक क्षेत्र साथ-साथ कार्य करते हैं तथा जिसके अंतर्गत गतिविधि का क्षेत्र स्पष्ट रूप से निर्धारित होता है। राज्य की प्रधान भूमिका के कारण प्रशासनिक प्रणाली का विस्तार किया जाता है, जिससे यह अपेक्षा की जाती है कि सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा किए जा रहे बहुस्तरीय कार्यों को भी किया जाए।

हाल के दशकों में एक रुचिकर रुझान सामने आया है, जिसमें लगभग प्रत्येक देश में सरकार का अर्थव्यवस्था में दख़ल घटा है। भारत में भी आर्थिक विकास में निजी क्षेत्र को वरीयता दी जा रही है। वास्तविकता यह है कि सरकार मुख्यतः संवर्धक बन गई है। विस्तारशील सार्वजनिक प्रशासनिक प्रणाली को सीमित करने के लिए सार्वजनिक प्रणाली में बाज़ार संकल्पनाओं का विस्तार हो रहा है। इन सकल्पनाओं के अंतर्गत निजीकरण, नौकरशाही का विस्तार निम्नीकरण, उद्यम संचालन, नए-नए अविष्कार, संस्थागत कार्यकलाप, गुणवत्ता प्रबन्धन व ग्राहक-सेवा शामिल हैं।

- **भ्रष्टाचार (Corruption)**

भारत में सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरशाही, जनसामान्य में निरंतर अपनी विश्वसनीयता समाप्त करती जा रही है। नौकरशाही में निहित विवेकाधिकार नियमों की अनदेखी कर, स्वयं के व्यक्तिगत आधार पर लिए गए निर्णय, नौकरशाही में भ्रष्टाचार और राजनीतिक दखलअंदाजी का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

भारत में भ्रष्टाचार त्रिकोणीय है जिसमें मुख्यतः राजनीतिज्ञों, व्यापारी वर्ग और लोक सेवक शामिल हैं, हमारी शासन प्रणाली में इसके व्याप्त होने के दो प्रमुख कारण हैं, पहला है हमारे प्रशासनिक ढाँचे में पारदर्शिता का अभाव, दूसरा सेवाओं के प्रावधान में देरी, और तीसरा सुस्पष्ट जवाबदेही का अभाव। अतः पारदर्शिता लाने, लाल फीताशाही व सेवाएँ प्रदान करने में देरी पर अंकुश लगाने के लिए हमारी सार्वजनिक प्रणाली को सूचना प्रौद्योगिकी को व्यापक रूप से प्रयुक्त करने की दिशा में उन्मुख होना होगा।

सार्वजनिक प्रणाली में प्रशासन के परम्परागत मॉडल में सामान्यतः अनेकों तथा विरोधाभासी कार्य होते हैं। परम्परागत मॉडल का लक्ष्य सार्वजनिक सेवाओं को मुहैया कराना है, भले ही उससे नागरिक संतुष्ट हो या न हों, इस पर विचार नहीं किया जाता। जबकि इसके विपरीत, प्रशासनिक सुधारों पर आधारित नव-लोक प्रबन्धन व्यवस्था में सार्वजनिक प्रणाली प्रबन्धन का केन्द्र बिन्दु, नागरिक है अर्थात् प्रबन्धन के नए स्वरूप में नागरिकों के हितों की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। इसलिए आज के दौर में सार्वजनिक प्रणाली अधिक लचीली (Flexible), परामर्शक (Consultative), परिणाम-केन्द्रित (Outcome-focused) तथा निम्न से लेकर उच्च स्तरों तक सृजनात्मकता को बढ़ावा देने तथा नई खोजों के समर्थन में अग्रलक्षी होनी चाहिए।

वैश्विक संदर्भ में, भारतीय राज्य उन आर्थिक नीतियों को प्रोत्साहित व सवंर्धित करने का दायित्व लेने का प्रयास कर रहा है जो विश्व-मुक्त व्यापार, सार्वजनिक क्षेत्र का निजीकरण, सार्वजनिक-निजी सहभागिता (PPP) मॉडल को अपनाना, कर-सुधार, पर्यावरण और परमाणु निरस्त्रीकरण संबंधी समझौतों के मानदंडों के अनुरूप है। न्यूनतमवादी राज्य पर बल देने के बावजूद, भारतीय राज्य नौकरशाही का विस्तार निमीकरण करके सार्वजनिक क्षेत्र को मुख्यधारा में लाकर, सुविधावंचितों के कल्याण को बढ़ावा देकर तथा मानव अधिकारों, सामाजिक न्याय और आर्थिक समता के प्रति प्रयास करने के लिए प्रोत्साहित करके परिवर्तनशील परिदृश्य में स्वयं को ढालने के लिए स्वयं को बदल रहा है।

3.5 राज्य और अर्थव्यवस्था का परिवर्तनशील स्वरूप

हाल के वर्षों में राज्य प्रभावित विकास में एक उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। लगभग सभी विकासशील देश बाजारोन्मुखी विकास की कार्यनीति की ओर अग्रसर हुए हैं। भारत में बाज़ार आधारित शासन का प्रारूप योजनाओं के केन्द्र में रहा हैं। विकास की बदलती अवधारणा, वैश्वीकरण और नई प्रौद्योगिकियों का विकास कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण कारक हैं जिन्होंने राज्यों के काम-काज के तरीकों को प्रभावित व परिवर्तित किया है। बाजारोन्मुखी अर्थव्यवस्था के प्रभाव में राज्य अधिकतम लाभ व प्रतिस्पर्धा, निर्यात-प्रेरित औद्योगीकरण, विदेशी निवेश और प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित करने और राज्य प्रेरित विकास की पुरानी संकल्पना को परिवर्तित करने के लिए पुनः कार्य कर रहा है।

आर्थिक उदारीकरण के नाम पर, कुछ नीतियों को बदलकर निजी क्षेत्र को विकास के सभी क्षेत्रों में प्रवेश का अवसर प्रदान किया गया। अब विकास विभिन्न संस्थानों और सरकार का एक समग्र (सहयोगात्मक) प्रयास बन गया है। निजी क्षेत्र व गैर-सरकारी संगठनों के बीच जिम्मेदारियों का बँटवारा होने से सरकार का बोझ भी कम हुआ है। भारत में सार्वजनिक प्रणालियों को इन परिवर्तनों के अंतर्गत कार्य करना होगा व कार्यों में भागादारी विकसित करनी होगी जिससे कि अधिक विकासात्मक परिणाम प्राप्त किए जा सकें।

राज्य को वंचित व संवेदनशील जनसमूह को खाद्य-सुरक्षा, रोज़गार गारंटी, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा तथा मूलभूत संरचना के सृजन, जैसे समाज कल्याण कार्यक्रमों की मूलभूत ज़िम्मेदारियों से पीछे नहीं हटना चाहिए। भारत के प्रभावी सार्वजनिक प्रणाली प्रबन्धन के जरिए बाज़ार को जन-हितैशी बनाना होगा। भारत में सभी स्तरों पर सार्वजनिक प्रणाली प्रबंधन के नए रूप से पुनः अभिविन्यास करने की आवश्यकता है। उन्हें ऐसे तरीकों से पुनः बनाना होगा जिससे कि बाज़ार और निजी क्षेत्र नागरिक समाज (Civil Society) और लोगों जैसे बहुभूमिका निभाने वाले व्यक्ति से मिलाकर लोकतांत्रिक राजनीतिक संरचना में सामाजिक न्याय के साथ वृद्धि के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

बोध प्रश्न–2

नोटः– क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिये।

ख) इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों को मिलाइए।

1) शासन प्रणाली में भ्रष्टाचार व्याप्त होने के मुख्य कारण क्या हैं?

....

....

....

2) वर्तमान संदर्भ में राज्य के परिवर्तनशील स्वरूप का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

3.6 निष्कर्ष

सार्वजनिक प्रणाली प्रबन्धन और परिवेश जिसमें ये प्रणालियाँ कार्य करती हैं, उन दोनों के बीच काफी घनिष्ठ संबंध होता है। सार्वजनिक प्रणालियों का व्यवहार समाज द्वारा स्थापित विभिन्न मूल्यों से प्रभावित होता है। सामाजिक-आर्थिक स्थिति न केवल सार्वजनिक प्रणालियों की कार्य प्रणाली को प्रभावित करती है, बल्कि उन्हें नया स्वरूप और कार्य करने के ढंग को एक नई दिशा प्रदान करती है। सार्वजनिक प्रणालियों के संरचनात्मक और व्यवहार सम्बन्धी प्रतिमान, कर्मचारियों की नियुक्ति और उन्हें बनाए रखने के तरीके, पुरस्कृत करने का ढंग, वित्तीय क्षमता और प्रबन्धन व्यवहार, जनता के प्रति जवाबदेही, सार्वजनिक प्रणाली का मूल दर्शन व नैतिकताओं आदि पर लगातार नज़र रखी जाती है। व्यापक तौर पर सार्वजनिक प्रणालियों को देश के बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश में देश के विकास व वैश्वीकरण के दौर में पुनःगठित व पुनःअभिविन्यासित करने की बेहद आवश्यकता है। सार्वजनिक प्रणाली के कुछ परम्परागत मूल्य व धारणाएँ – जैसे निष्पक्षता, तटस्थता, जवाबदेही, जिम्मेदारी और समानता आज परिवर्तन के दौर में है और उनके स्थान पर सार्वजनिक प्रणाली की कार्य प्रणाली में नई अवधारणा जैसे, तटस्थता, निष्पक्षता, प्रतिस्पर्धा, सक्षमता, गुणवत्ता, उत्पादकता और लाभ-हानि आदि सम्मिलित हो गए हैं, जिससे कि ये घरेलू व अंतर्राष्ट्रीय मोर्चों पर पैदा हुई नई परिस्थितियों व दबाव का सफलतापूर्वक सामना कर सकें।

बदलते परिवेश में विकास के लक्ष्य को पाने के लिए सार्वजनिक प्रणालियों को सहयोगात्मक वातावरण विकसित करना होगा। उन्हें स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा और पिछड़े वर्गों के उत्थान जैसे सामाजिक क्षेत्र में प्रमुख विकासात्मक भूमिका निभानी होगी। उन्हें न केवल उत्पादकता और वृद्धि की ओर ध्यान देना होगा बल्कि इसके साथ ही उन्हें सामाजिक न्याय और समानता के लिए भी प्रयास करने होंगे। सार्वजनिक प्रणाली प्रबन्धन को सफल एवं विकासात्मक परिणाम प्राप्त करने हेतु सार्वजनिक गैर-सरकारी सहभागी दृष्टिकोण को अपनाना होगा। उन्हें आर्थिक विकास, वितरक न्याय और सामाजिक समानता में बोधगम्य (Perceptible) परिवर्तन लाने की दिशा में काम करना होगा।

3.7 शब्दावली

संरचनात्मक समायोजन और स्थायित्व कार्यक्रम (Structural Adjustment and Stabilisation Programme) : बाज़ार शक्तियों को महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करने योग्य बनाने के लिए कई देशों में 1980 व 1990 के दशकों के दौरान संरचनात्मक परिवर्तन लाने की आवश्यकता महसूस की गई। इसके अंतर्गत भारतीय अंतर्राष्ट्रीय कोष (आई. एम.एफ.), विश्व बैंक, अमेरिकी कांग्रेस आदि द्वारा प्रोत्साहित सुधार उपाय शामिल हैं, जिनका उद्देश्य – खासकर लैटिन अमेरिकी देशों द्वारा, आर्थिक संकट को कम करना है। इस कार्यनीति का उद्देश्य व्यापार व वित्तीय

क्षेत्रों में कुछ संरचनात्मक उपायों, निजीकरण और घरेलू बाज़ारों के विनियमन के माध्यम से अर्थव्यवस्था को स्थिर करना है। इन सुधारों का उद्देश्य शेष भुगतानों, सरकारी बजटों, धनराशि की आपूर्ति, बाज़ार कार्य को जारी रखने आदि में सुधार लाना है।

उपभोक्ता प्रभार (User Charges) : ये प्रभार सरकारी गतिविधियों के संबंध में सेवाएँ प्रदान करने या उत्पादों की बिक्री के लिए लगाए जाते हैं। चूँकि वस्तुओं व सेवाओं का उपभोग नागरिक करते हैं, अतः वे ही इन प्रभारों का भुगतान करते हैं। इनमें पूंजी लागतों का कोई शुल्क शामिल नहीं होगा। कुछ देशों में सार्वजनिक क्षेत्र में संसाधनों के आवंटन को सुधारने के लिए उपभोक्ता शुल्क लिए जाते हैं।

पारदर्शिता (Transparency) : पारदर्शिता से तात्पर्य निर्णय लेने में की गई गतिविधियों को छुपाकर न रखना तथा आम लोगों की सरकार की गतिविधियों व सूचनाओं (केवल राष्ट्रीय सुरक्षा, रक्षा इत्यादि से संबंधित अति संवेदनशील मुद्दों को छोड़कर) तक आसानी से पहुँच बनाना है।

3.8 संदर्भ लेख

Arora, Dolly, 2000, "Public Management Reforms" in Ramesh K. Arora (Ed), 2004, *Public Administration Fresh Perspectives*, Aalekh Publishers, Jaipur.

Arora, Ramesh. K, (Ed), 2001, *Management in Government: Concerns and Priorities,* Aalakh Publishers, Jaipur.

Arora, Ramesh K (Ed.), 2004, *Public Administration: Fresh Perspectives,* Aalekh Publishers, Jaipur.

Hughes Owen, E, (Ed), 1994, *Public Management and Administration – An Introduction*, St. Martin"s Press Inc., New York.

Jayal, Niraja Gopal and Sudha Pai (Eds), 2001, *Democratic Governance in India: Challenges of Poverty, Development and Identity*, Sage publications, New Delhi.

Pant, K.C, 2003, *India"s Development Scenario: Decade and Next Beyond*, Academic Foundation, New Delhi.

Sahni, Pardeep, and Uma Medury (Eds), 2003, *Governance for Development: Issues and Strategies*, Prentice-Hall of India Private Limited, New Delhi.

The Indian Journal of Public Administration, 2004, Golden Jubilee Special Number, Governance for Development, Vol.L, No. 1, January – March.

Reddy, Y.V, 1999, "State and Market: Altering the Boundaries and Emerging New Balances", *Asian Economic Review*, Vol. 41, No.3, December.

Bhaduri, Amit and Deepak Nayyar, 1996, *The Intelligent Person"s Guide to Liberalism,* Penguin Books, New Delhi

Kapila, Raj and Uma Kapila (Eds.), 2002, *A Decade of Economic Reforms in India-the past, the present, the future,* Academic Foundation, New Delhi.

Kapila, Uma, 2003, *Indian Economy,* Academic Foundation, New Delhi.

Misra, S.K and V.K Puri, 2003, *Indian Economy,* Himalaya Publishing House, Delhi.

Sahni, Pardeep and Uma Medury (Eds.), 2003, *Governance for Development: Issues and Strategies,* Prentice-Hall of India Private Limited, New Delhi.

The Indian Journal of Public Administration, 2004, Special Number of "Governance for Development", Vol. L, No.1, January-March.

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिये :

   प्रबंधकीय उपागम में सम्मिलित मुख्य घटक इस प्रकार हैं :

   - निष्पादन भुगतान सहित मानव संसाधन में सुधार लाना।
   - निर्णयन प्रक्रिया में कर्मचारियों को शामिल करना।
   - सख़्ती कम करना (थोड़ी ढील बरतना) लेकिन कार्य-निष्पादन के लक्ष्य निर्धारित करना।
   - सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना।
   - उपभोक्ताओं को सेवाएँ प्रदान करना।
   - उपभोक्ता प्रभार (यूजर चार्ज) लगाना।
   - अनुबंध पर काम कराना (Contracting Out)।
   - एकाधिपत्य कम करना।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिये :

   निम्नलिखित उद्देश्य के लिए दूरसंचार, बीमा, वित्त इत्यादि क्षेत्रों में विनियामक प्राधिकरणों की स्थापना की गईः

   - अहितकारी प्रतिस्पर्धा से बचना और नागरिकों के लिए सेवाओं व उत्पादों का उचित मूल्य सुनिश्चित करना।
   - मूलभूत सुविधाओं और सेवाओं का प्रावधान।
   - आर्थिक वृद्धि के लिए अतिरिक्त वित्तीय संसाधन आकर्षित करने के साथ-साथ सार्वजनिक-निजी भागीदारों के लिए अनुकूल माहौल तैयार करना।
   - सभी निवेशकों को समस्तरीय क्षेत्र मुहैया कराना।

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिये :

- प्रशासन में पारदर्शिता का अभाव
- सेवाओं के प्रावधान में विलंब
- सुस्पष्ट जवाबदेही का अभाव

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिये :

- विकास की बाज़ार-निर्धारित कार्यनीति
- अधिक से अधिक लाभों, प्रतिस्पर्धा, विदेशी निवेश और प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित करने के लिए राज्य का पुनर्विनीकरण (Reinvention)
- राज्य बाज़ार और गैर-सरकारी संगठनों में सहयोग
- राज्य को उसकी मूलभूत सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों के प्रदाता की भूमिका से वंचित न करना।